प्राक्कथन

भारतीय संस्कृति के इतिहास में श्रमण संस्कृति का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। जिसे आज हम जैन-धर्म के नाम से जानते हैं वह इसी श्रमण धर्म का विकसित रूप है। श्रमण, निर्ग्रन्थ, अर्हत् आदि इस धर्म के प्राचीन नाम हैं। श्रमण का अर्थ है समभाव रखने वाला, पुरुषार्थ (श्रम) करने वाला तथा इन्द्रियों के विषयों का शमन करने वाला, ऐसे तपस्वी व साधक व्यक्ति का धर्म है—श्रमण धर्म। जिसके कोई ग्रन्थि (परिग्रह अथवा कषाय) न हो वह निर्ग्रन्थ है। वही अर्हत् (पूज्य) है। उनके द्वारा प्रतिपादित धर्म निर्ग्रन्थ अथवा अर्हत्-धर्म है। तीर्थंकरों की परम्परा बहुत प्राचीन है। भगवान् ऋषभदेव से भगवान् महावीर तक उसका विस्तार है। महावीर समय से आज तक श्रमण-परम्परा का बहुआयामी विकास हुआ है। अतः उसे किसी लघु-पुस्तिका में प्रस्तुत कर पाना संभव नहीं है। फिर भी श्रीमान् ज्योतिसिंहजी मेहता ने श्रमण-परम्परा की रूपरेखा में जो सामग्री दी है वह प्रेरणास्पद है और इस सुदीर्घ परम्परा के कतिपय पक्षों की ओर पाठक का ध्यान आकर्षित करती है।

श्रमण संस्कृति के प्रथम उद्घोषक भ. ऋषभदेव का समय आदि मानव सभ्यता का काल था। सिन्धु सभ्यता के अवशेषों में उनका अस्तित्व एवं ऋग्वेद तथा परवर्ती साहित्य में उनका स्मरण इस बात का प्रमाण है। ऋषभदेव ने केवल निर्ग्रन्थ धर्म का उपदेश ही नहीं दिया था, अपितु अपने समय के मानव को लिपि, भाषा, साहित्य और कला आदि के ज्ञान से भी परिचित कराया था। इतिहास साक्षी है कि श्रमण परम्परा में धर्म और दर्शन के प्रचार के साथ-साथ समन्वित रूप से भाषा, साहित्य और कला का संरक्षण और प्रसार भी होता रहा है। इस महत्त्वपूर्ण सामग्री का आकलन व मूल्यांकन भारतीय व विदेशी विद्वानों ने अपने महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों में किया है। स्व. डॉ. हीरालाल जैन की प्रसिद्ध पुस्तक "भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का योगदान", डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री की पुस्तक "भ. महावीर और उनकी आचार्य परम्परा" (चार भाग), डॉ. घोष द्वारा संपादित "जैन कला और स्थापत्य", पं. दलसुख मालवणिया, डॉ. मोहनलाल मेहता आदि विद्वानों द्वारा संपादित "जैन साहित्य का बृहत् इतिहास (भाग 6) आदि कुछ ऐसे ग्रन्थ हैं जो श्रमण-

उनके अध्ययन के बिना आज रामायण और महाभारत का अध्ययन पूरा नहीं माना जाता। यही स्थिति भारतीय गणित, ज्योतिष, आयुर्वेद, व्याकरण और कोश आदि के साहित्य के सम्बन्ध में भी है। इस दृष्टि से जैन साहित्य का अध्ययन-अनुसंधान होना अभी अपेक्षित है।

श्रमण परम्परा में भारतीय कलाओं का संरक्षण और संवर्धन भी प्राचीन समय से होता रहा है। भारतीय मूर्तिकला के मर्मज्ञ इस बात को स्वीकार करते हैं कि अब तक उपलब्ध सबसे प्राचीन मूर्ति जैन तीर्थंकर की ही है। खारवेल के शिलालेख से यह बात प्रमाणित होती है कि कुषाण युग में जिन बिम्ब का अच्छा प्रचलन था। मथुरा के कंकाली टीले से प्राप्त मूर्ति-कला में जैन कला का ही प्राधान्य है। गुप्तकाल की कला के अनेक निदर्शन देवगढ़ की जैन कला में उपलब्ध हैं। मध्ययुग में श्रवणबेलगोला, खजुराहो, देलवाड़ा, राणकपुर, बेलूर आदि स्थानों की जैन मूर्ति-कला अपनी कलात्मकता और सुन्दरता के लिये विश्व-विख्यात है, केवल मूर्ति-कला के क्षेत्र में ही नहीं, मन्दिर-स्थापत्य कला की दृष्टि से भी जैन मन्दिर अद्वितीय हैं। सुदूर दुर्गम वनों और दुर्लंघ्य पर्वतों पर जैन मन्दिरों के निर्माण से भारतीय कला का संरक्षण ही नहीं हुआ, अपितु देश के विभिन्न भागों को सौन्दर्य प्रदान भी श्रमण परम्परा के द्वारा हुआ है। आज इस सांस्कृतिक-थाती की राष्ट्रीय स्तर पर सुरक्षा और प्रचार प्रसार की आवश्यकता है।

भारतीय चित्रकला के विकास में श्रमण परम्परा का अपूर्व योगदान है। जैन साहित्य में भित्ति-चित्रों के सम्बन्ध में विविध और विस्तृत जानकारी उपलब्ध है। अजन्ता की चित्रकला के समकालीन तंजोर के समीप 'सित्तन्नवा-सल' की भित्ति-चित्रकला आज भी सुरक्षित है, जिसे एक जैन राजा ने बनाया था। यह स्थान 'सिद्धानां वासः' का अपभ्रंश प्रतीत होता है। एलोरा के कैलाश मन्दिर, तिरुमलाई के जैन मन्दिर तथा श्रवणबेलगोला के जैन मठ के भित्ति-चित्र भी प्राचीन चित्रकला के अद्भुत नमूने हैं।

जैन ग्रन्थ भण्डारों में ताड़पत्रीय एवं कागज पर बने चित्र भी अपनी कलात्मकता के लिए विश्वविख्यात है। मूडबिद्री में षट्खंडागम की सुचित्र ताड़पत्रीय प्रतियां सुरक्षित हैं। पाटन में निशीथचूर्णि की ताड़पत्रीय प्रति में

[illegible] चित्र भी ताड़पत्रों के ग्रन्थों में [illegible] । इनकी [illegible] जैन [illegible] गुजराती शैली, अपभ्रंश शैली, जैन शैली आदि नाम दिये गये हैं । [illegible] शताब्दी के लगभग कागज और वस्त्रों पर भी जैन चित्र [illegible] कल्पसूत्र, कालकाचार्य कथा, [illegible], [illegible], [illegible] कथा आदि अनेक ग्रन्थों की सचित्र प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं, जो भारतीय चित्रकला की बहुमूल्य निधि हैं । इन सबकी सुरक्षा की सुव्यवस्था जितनी आवश्यक है, उतनी जरूरी बात यह भी है कि भारतीय कला के मूल्यांकन व इतिहास लेखन में इन सब सामग्री का गहन अध्ययन के बाद उपयोग भी होना चाहिये । तभी भारत का सांस्कृतिक इतिहास सर्वाङ्गीण और प्रामाणिक हो सकेगा ।

श्रीमान् जोधसिंहजी मेहता, 'रोवर स्काउटिंग', 'आदिवासी भील', 'चित्तौड़गढ़', 'आबू टू उदयपुर', 'प्रताप दी पेट्रीयट' और 'आबू-दिग्दर्शन' हिन्दी और अंग्रेजी आदि पुस्तकों के लेखक हैं । जैन साहित्य और कला के प्रचार प्रसार के प्रति उनकी विशेष अभिरुचि है । उसी का परिणाम है प्रस्तुत पुस्तक 'श्रमण- परम्परा की रूपरेखा' इतने सीमित पृष्ठों में उन्होंने जो सामग्री दी है: उससे श्रमण-परम्परा के कई पक्षों की जानकारी पाठक को प्राप्त होगी । आशा है, श्री मेहता सा. की अन्य पुस्तकों की भाँति यह पुस्तक भी समाज और सुधी जनों में समादृत होगी ।

गुरु नानक जयन्ती, 1977

—डॉ. प्रेमसुमन जैन
सहायक प्रोफेसर
प्राकृत संस्कृत विभाग
उदयपुर [illegible]

दो शब्द

भारतीय चिन्तन व अध्यात्म के इतिहास में श्रमण एवं वैदिक विचार-धारा प्रायः समानान्तर रूप से प्रवाहित हुई हैं। दोनों ने क्रमशः पुरुषार्थ और भक्ति के मार्ग को प्रमुखतः अपना कर मुक्ति के मार्ग का प्रवर्तन किया है। नैतिक गुणों और सदाचार की प्रतिष्ठा दोनों में है; किन्तु श्रमण परम्परा को जैन विचारधारा ने ध्यान और साधना के क्षेत्र में विशेष बल दिया है। यही कारण है श्रमण परम्परा में तपस्या और आत्मज्ञान की अधिक प्रतिष्ठा है। श्रमण संघ और तपः पूत आचार्यों की अनवरत शृङ्खला है। श्रीमान् जोधसिंहजी मेहता ने अपनी इस लघु पुस्तिका 'श्रमण-परम्परा की रूपरेखा' में संक्षेप में श्रमण-परम्परा के उन्हीं आचार्यों एवं धर्मनिष्ठ व्यक्तियों का परिचय दिया है, जिन्होंने जैन संस्कृति के उन्नयन में अपना जीवन यापन किया है। श्री मेहता का यह लघु प्रयास पाठकों को श्रमण संस्कृति के विविध पक्षों से परिचित कराता है तथा प्रेरित करता है कि भारतीय संस्कृति को जानने के लिए श्रमण संस्कृति को गहराई से देखा, परखा जाय। श्री मेहता ने इस पुस्तक में पारम्परिक एवं ऐतिहासिक दोनों प्रकार की सामग्री का प्रयोग किया है।

वस्तुतः सामाजिक एवं ऐतिहासिक स्तर पर ही नहीं, अपितु भारतीय दर्शन के विकास के क्षेत्र में भी श्रमण संस्कृति के चिन्तकों ने महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। आत्मा के स्वरूप एवं उसके विकास की विभिन्न स्थितियों, ज्ञान के विभिन्न प्रकारों, प्रमाण और नयों का सिद्धान्त चर्चा में प्रयोग, ध्यान और योग की साधनाएँ तथा जगत् के वास्तविक स्वरूप का वैज्ञानिक विश्लेषण आदि के सम्बन्ध में तीर्थंकरों एवं जैन आचार्यों ने अपना गहन चिन्तन मनन प्रस्तुत किया है। उससे भारतीय दर्शन की विचारधाराएँ कब और कैसे प्रभावित हुई हैं, दोनों विचारधाराओं का समन्वित स्वरूप क्या उभर कर आया है, आदि के क्रमबद्ध इतिहास लिखे जाने की आवश्यकता है। तभी श्रमण परम्परा का वास्तविक स्वरूप उजागर हो सकेगा।

वर्तमान युग में सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में अनेक समस्याएं हैं। श्रमण परम्परा का इतिहास ही नित नई समस्याओं से जूझने का रहा है। अतः यह नितान्त आवश्यक हो गया है कि श्रमण संस्कृति की आचार मीमांसा, ज्ञान मीमांसा आज के युग में किस प्रकार अधिक सार्थक हो सकती है, इस पर गहराई से विचार किया जाय। वर्तमान में जैन परम्परा के उपासकों को क्या करणीय है, जिससे समाज और देश के विकास में उनका योगदान वर्णनीय हो सके, इस पर भी व्यावहारिक रूप से सोचने की आवश्यकता है। श्री मेहताजी ने अपनी इस पुस्तक में देश भर में 2500 वें निर्वाण वर्ष में किये गये कार्यों का विहंगमावलोकन भी किया है। उसका यही प्रतिपाद्य है कि हम आत्मलोचन कर आगे का मार्ग निर्धारित कर सकें।

डॉ० कमलचन्द सोगानी
रीडर एवं अध्यक्ष
दर्शन विभाग,
उदयपुर विश्वविद्यालय, उदयपुर

प्रस्तावना

कुछ वर्षों पूर्व. स्व. मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी विरचित 'भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा' का इतिहास पढ़ा था जिसमें भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा के श्रमणों के समय में, जैन धर्म के विकास का विविध विधाओं में जो अभ्युदय हुआ. उसका विद्वान् मुनिवर्य ने, अति कठिन परिश्रम करके सविस्तार विवरण दिया है। इस ग्रन्थ का दोनों भागों का गहन पठन पाठन और अध्ययन करने के पश्चात्, मेरे मन में भगवान् महावीर की परम्परा का इतिहास लिखने की भावना जागृत हुई और तदनन्तर, इस सम्बन्ध में कुछ पुस्तकें देखी, फिर भी, इस विषय पर प्रचुर सामग्री उपलब्ध होने पर, विशाल ग्रन्थ की रचना करना सम्भव न हो सका। भगवान् महावीर का 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव समीप आने पर, यह भावना पुनः प्रबल हो उठी किन्तु आर्थिक संबल न मिलने के कारण, कुछ नहीं हो सका। इस पुनीत वर्ष में यह निश्चय किया कि भगवान् महावीर के 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव के उपलक्ष में श्रद्धाञ्जलि स्वरूप, भगवान् महावीर के निर्वाण के पूर्व और पश्चात्, जो श्रमण संस्कृति का प्रवाह रहा है, उसका सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचन कर, श्रमण परम्परा की रूपरेखा ही प्रस्तुत की जावे। माउण्ट आबू पर संयोजित भगवान् महावीर की 2500 वीं निर्वाण महोत्सव समिति ने, इस विचार को पसन्द कर, इस लघु पुस्तक को प्रकाशित करने का निर्णय लिया जो पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है।

श्रमण संस्कृति अति प्राचीन है। जैन धर्म की मान्यतानुसार आदि में कितने ही जैन श्रमण तीर्थंकर, आचार्य, उपाध्याय, साधु और साध्वी एवं श्रमणोपासक श्रावक और श्राविकाएं हो चुके हैं और आगे भी अनन्त ऐसे होयेंगे। श्रमण-संस्कृति तप-त्याग प्रधान संस्कृति है जो मोक्ष साधना में उपयोगी है। श्रमणों का जीवन विशुद्ध, अहिंसात्मक, तपोमय और लोकोपकारी होता है। वे न केवल अपनी आत्मा का उद्धार करते हैं, परन्तु समस्त प्राणीमात्र को अपने उपदेश और उदाहरण से, सिद्ध अवस्था प्राप्त कराने में सहायक होते हैं।

श्रमणों ने अपने प्रवचनों से, चक्रवर्ती सम्राटों, राजाओं, महाराजाओं, श्रेष्ठियों एवं साधारण जनता को आकृष्ट कर, उनका आत्म कल्याण किया है। श्रमण भगवान् महावीर ने, श्रेणिक, चेटक, प्रद्योत, उदायन आदि राजाओं आनन्द और कामदेव आदि उपासक श्रावकों, चंदनबाला और मृगावती आदि साध्वियों और दलित समझे जाने वाले लोगों तथा चंडकौशिक नाग को प्रतिबोधित कर उनका उद्धार किया है। भगवान् महावीर की परम्परा में आचार्य सुहस्तिसूरि ने, सम्राट सम्प्रति को अपना अनुयायी बना कर, भारत के बाहर सुदूर प्रदेश में श्रमण संस्कृति का प्रचार किया है। कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्यजी ने गुजरात के राजा कुमारपाल को परमार्हत श्रमणोपासक बना कर, सारे राज्य में अमारि (अहिंसा) का ऐसा जबर्दस्त डंका बजवा दिया कि यूक जूं तक मारना निषेध था, महा प्रभावक आचार्य श्री हरि विजय सूरिजी ने अपने वचनामृत से, सम्राट अकबर को श्रद्धालु बना कर, जीव हिंसा निषेध के कई फरमान (पट्टे और परवाने) जारी करवाये। इतना ही नहीं, बादशाह अकबर जैन धर्म से इतना प्रभावित हुआ कि मांस मदिरा से परहेज करने लग गया। आधुनिक समय में स्व. आचार्य श्री आत्मारामजी ने, जैन स्नातक श्री वीरचन्द राघवजी को, कुछ महिनों तक, इस संस्कृति का अध्ययन करा, शिकागो, अमेरिका की विश्व धर्म परिषद् में भेज कर, विश्व में जैन धर्म की ख्याति प्रकट की। इस प्रकार कई श्रमणों और श्रमणियों ने, कई आत्माओं का जीवन सफल कर श्रमण संस्कृति को सुदृढ़ और सबल

वे कंचन और कामिनी के त्यागी होते हैं। सदैव आत्म चिंतन में रमण करते हैं और सासारिक जीवों को भी इस पथ पर विचरण करने के लिये प्रेरित करते रहते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में, ऐसे निःस्वार्थी, त्यागी और परोपकारी श्रमणों और श्रमणोपासकों का परिचय दिया गया है जिन्होंने इस संस्कृति के सिद्धान्तों का प्रचार और प्रसार करके जैन धर्म का उज्ज्वल और उन्नत विकास किया है। इन महान् पुरुषों ने न केवल लोकोत्तर और लोकोपयोगी विविध विषयों पर विशाल ग्रन्थों का सृजन किया है; किन्तु वास्तु, स्थापत्य, चित्रकला एवं मूर्त्ति कला आदि कई क्षेत्रों में अनुपम योगदान भी प्रदान किया है।

श्रमणों ने अपने प्रवचनों से, बड़े-बड़े सम्राटों, राजाओं, महाराजाओं, राजनयिकों एवं साधारण जनता को जागृत कर, उनका आत्म कल्याण किया है। स्वयं श्रमण भगवान् महावीर ने श्रेणिक, चेटक, प्रद्योत, उदायन आदि राजाओं आनन्द और कामदेव आदि साधारण व्यक्तियों, चंदनबाला और मृगावती आदि सतियों और दलित समझे जाने वाले लोगों तथा चंदकौशिक नाग को प्रतिबोधित कर उनका उद्धार किया है। भगवान् महावीर की परम्परा में आचार्य सुहस्तिसूरि ने, सम्राट सम्प्रति को अपना अनुयायी बना कर, भारत के बाहर सुदूर प्रदेश में श्रमण संस्कृति का प्रचार किया है। कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्यजी ने गुजरात के राजा कुमारपाल को परमार्हत श्रमणोपासक बना कर, सारे राज्य में अमारि (अहिंसा) का ऐसा जबर्दस्त डंका बजवा दिया कि यूक जूं तक मारना निषेध था, महा प्रभावक आचार्य श्री हरि विजय सूरिजी ने अपने वचनामृत से, सम्राट अकबर को श्रद्धालु बना कर, जीव हिंसा निषेध के कई फरमान (पट्टे और परवाने) जारी करवाये। इतना ही नहीं, बादशाह अकबर जैन धर्म से इतना प्रभावित हुआ कि मांस मदिरा से परहेज करने लग गया। आधुनिक समय में स्व. आचार्य श्री आत्मारामजी ने, जैन स्नातक श्री वीरचन्द राघवजी को, कुछ महिनों तक, इस संस्कृति का अध्ययन करा, शिकागो, अमेरिका की विश्व धर्म परिषद् में भेज कर, विश्व में जैन धर्म की ख्याति प्रकट की। इस प्रकार कई श्रमणों और श्रमणियों ने, कई आत्माओं का जीवन सफल कर श्रमण संस्कृति को सुदृढ़ और सबल

बनाया है। जिनका समावेश इस छोटी पुस्तक में करना सम्भव नहीं है। यहाँ पर इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि उन्होंने अपने सदुपदेश से कई लोकोत्तर और महान् लोकोपकारी कार्य सम्पादन कराये हैं जो आज भी स्वर्णाक्षरों में अंकित हैं।

राजाओं और महाराजाओं को छोड़ कर, जैन मंत्रियों और जैन श्रमणों ने, अपनी लक्ष्मी का प्रचुर सद्व्यय कर, संसार में अलौकिक जैन मन्दिर देलवाड़ा आबू, राणकपुर, श्रवण बेलगोला आदि निर्माण करवाये हैं जो भारत की ही नहीं किन्तु विश्व की अमूल्य निधि हैं। ये अनुपम मन्दिर आत्मोत्थान के अमर स्रोत तो हैं ही साथ ही साथ वास्तु और स्थापत्य कला के क्षेत्र में, भी अद्वितीय और बेजोड़ हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में, भगवान् महावीर के पूर्व, पश्चात् तीर्थङ्करों और आचार्यों का सूक्ष्म वर्णन करते हुए, भगवान् महावीर के जीवन और उपदेश तथा उनकी परम्परा का 2500 वर्ष के इतिहास का सिंहावलोकन किया गया है इसके साथ भगवान् महावीर का 2500वां निर्वाण महोत्सव जो राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर मनाया गया, उसका भी संक्षिप्त वर्णन किया गया है। अन्त में, अर्बुद-गिरि (आबू पर्वत स्थित भगवान् महावीर 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव समिति के कार्य विवरण का भी समावेश किया गया है जिसके द्वारा यह पुस्तक प्रकाशित की गई है।

स्थानाभाव के कारण, इस पुस्तक में, संभव है कि कुछ प्रभावक श्रमणों और श्रमणियों तथा श्रावक और श्राविकाओं का उल्लेख करना रह गया है, फिर भी आशा करता हूँ कि यह लघु पुस्तक, जैन इतिहास के जिज्ञासुओं के लिये परिचयात्मक और लाभदायक सिद्ध होगी और भविष्य में भी बृहद् इतिहास लिखने के लिए प्रेरणास्पद बनेगी। विषय की विशालता और गहनता को दृष्टि में रखते हुए, पुस्तक रचना में त्रुटियाँ और गल्तियाँ रहना संभव है। जिनको विद्वान् पाठक क्षमा करेंगे और भूल-सुधार के सुझाव देंगे तो उसकी आगामी संस्करण में क्षति पूर्ति की जा सकेगी। इस पुस्तक लिखने में, मुझे जिन ग्रन्थों और पुस्तकों से सहायता प्राप्त हुई, उसके प्रणेताओं और

नम्र-निवेदन

श्रमण संस्कृति का हमारे इतिहास में एक गौरवपूर्ण स्थान है। आज हम जिसे जैन धर्म के नाम से पुकारते हैं वह इसी श्रमण धर्म का विकसित रूप है। श्रमण निर्ग्रन्थ, अर्हत आदि इसी धर्म के प्राचीन नाम हैं। इस धर्म की परम्परा बहुत प्राचीन है। भगवान् ऋषभदेव से लगाकर श्रमण भगवान् महावीर तक इसका विकास हुआ है। भगवान् ऋषभदेव श्रमण संस्कृति के प्रथम उद्घोषक माने जाते हैं। उनका समय इतिहास की दृष्टि से आदि मानव सभ्यता का प्रारम्भिक काल था। इतिहास बताता है कि इस श्रमण परम्परा में न केवल धर्म और दर्शन का ही प्रचार हुआ वरन् भाषा, साहित्य, कला आदि का भी विकास हुआ। इस प्रकार भगवान् ऋषभदेव से लेकर आज तक के बहुमुखी विकास को प्राप्त इस श्रमण संस्कृति को एक लघु पुस्तिका में प्रस्तुत करना सर्वथा असम्भव मानते हुए भी भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति आबू पर्वत ने समिति के मंत्री, अनुभवी लेखक विद्वान् और श्रमण संस्कृति के ज्ञाता श्री जोधसिंह मेहता के माध्यम से यह छोटा सा प्रयास किया है, जो पाठकों के सामने है। इस समिति ने आबू पर्वत स्थित रमणीय नक्खी उद्यान में महावीर स्तम्भ लगवाकर स्थानीय नगरपालिका पुस्तकालय में महावीर कक्ष बनवाकर तथा अन्य छोटे-मोटे सार्वजनिक कार्य करवाकर इस महोत्सव को मनाया। यह प्रकाशन इसकी अन्तिम भेंट है। विद्वान् लेखक ने श्रमण परम्परा की रूपरेखा में जो सामग्री प्रस्तुत की है वह पाठकों के लिये प्रेरणादायक सिद्ध होगी, ऐसी हमें आशा है। समिति ने इस पुस्तक का सांकेतिक मूल्य 1 एक रुपया मात्र रखा है जिसकी आय से भगवान् महावीर स्तम्भ का रखरखाव व संरक्षण किया जावेगा। वह राशि सेठ कल्याणजी परमानन्दजी पेढी देलवाड़ा में जमा रहेगी, जो आवश्यकतानुसार संरक्षण हेतु खर्च की जा सकेगी।

श्रमण संस्कृति की रूपरेखा

पूर्व परिचय :

भारतवर्ष में दो मुख्य संस्कृतियां—जैन श्रमण संस्कृति (जैन एवं बौद्ध) और वैदिक संस्कृति प्रधान मानी जाती है। इन दोनों संस्कृतियों ने, देश के आन्तरिक और बाह्य जीवन के विकास में, अनेक प्रकार से योगदान दिया है। इसमें से श्रमण संस्कृति अति प्राचीन और त्याग-प्रधान गिनी जाती है। एक समय, श्रमण संस्कृति सारे भारत में फैल गई और उस समय, इस संस्कृति के उपासकों की संख्या करोड़ों के आस-पास पहुँच गई थी। यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है। जैन धर्म का अधिकाधिक विस्तार राजा संप्रति के समय लगभग वीर संवत् 297 (विक्रम संवत् पूर्व 173-ईसा सन् पूर्व 230) में हुआ था। भगवान् महावीर ने भारत में अपना धर्म-प्रचार किया था परन्तु राजा संप्रति ने, देश के बाहर भी जैन धर्म का प्रचार और प्रसार किया था। यह बड़ी विपुल जनसंख्या, प्रभावशाली धर्म-प्रणेताओं और प्रचारकों के निर्मल अन्तर तप तथा त्याग की झांकी कराती है।[1]

ऋषि और मुनि :

भारत और पाश्चात्य देशों के विद्वानों ने मुक्त-कण्ठ से स्वीकार किया है कि वेद पूर्व काल में, एक प्रगतिशील, समृद्ध और सर्वव्यापी श्रमण-संस्कृति थी जिसका उल्लेख वेदों, उपनिषदों और पुराणों में मिलता है। इन विद्वानों में डॉ. राधाकृष्णन्, डॉ. हर्मन जेकोबी, विन्सेण्ट स्मिथ आदि आते हैं। ऋषि और मुनि इन दो शब्दों को प्राचीन वैदिक साहित्य में, पर्यायवाची नहीं मानते हुए, भिन्न-भिन्न अर्थ में वर्णित किया गया है। ऋषि स्वभावत: प्रवृति-मार्गी होते थे और मुनि निवृति-मार्गी एवं मोक्ष-धर्म के प्रवर्तक होते थे। इन दोनों पक्षों को आजकल वैदिक मार्ग और श्रमण मार्ग शब्दों से सम्बोधित

---

1. भारतीय जैन श्रमण संस्कृति अने लेखन कला लेखक : स्व. मुनि श्री पुण्यविजयजी, प्रकाशक साराभाई मणीलाल नवाब, अहमदावाद पृष्ठ सं. 1-2

तप, तपस्या और तीर्थ यात्रा हेतु हजारों और लाखों रुपयों का सद्व्यय करके जैन सिद्धान्तों का अनुमोदन करते हुए अनेकोपयोगी सार्वजनिक कार्यों में भी अपना हाथ बँटा रहे हैं। इसका प्रत्यक्ष बोध महावीर के 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव (जो सन् 1974-75 में सारे देश और विदेश में मनाया गया) में, संसार को हुआ है।

प्रागैतिहासिक काल-चक्र :

जैन धर्म के प्रागैतिहासिक की ओर दृष्टिपात करते हैं तो यह ज्ञात होता है कि अति प्राचीन काल से जैन धर्म चला आ रहा है। इस मान्यता के अनुसार जैन धर्म में काल के दो भेद हैं—एक उत्सर्पिणी अर्थात् चढ़ता काल और दूसरा अवसर्पिणी काल अर्थात् उतरता काल। दोनों काल को जोड़ देने पर, वह 'काल-चक्र' कहा जाता है। एक काल-चक्र 20 कोटा कोटी सागरोपम[1] का होता है जिसमें असंख्याता समय बीत जाता है। भूत-काल में ऐसे कई काल-चक्र हो गये हैं और ऐसे कई एक भविष्य में होते रहेंगे। एक समय वर्तमान काल है और भूत, भविष्य और वर्तमान काल 'सर्व अद्धा काल' कहा जाता है।

तीर्थ और तीर्थङ्कर :

तारयतीति तीर्थ अर्थात् जो संसार समुद्र में तरा सके, उसे तीर्थ कहा जाता है। तीर्थ के दो प्रकार हैं—(1) जंगम और (2) स्थावर। जंगम में साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका आते हैं, जिनको चतुर्विध संघ कहा जाता है। ऐसे तीर्थ की स्थापना करने वाले को तीर्थङ्कर कहते हैं। 'तीर्थं करोतीति तीर्थङ्कर' अर्थात् जो तीर्थ को स्थापित करे वही तीर्थङ्कर कहलाते हैं। अनन्तानन्त काल में, अनन्त चौबीसी तीर्थङ्कर हो गये हैं और अनन्त ऐसे तीर्थङ्कर हो जायेंगे। अतः जैन प्रातः अनन्त चौबीसी जिन तीर्थङ्करों की वंदना करते हैं।

---

1. दस कोटा कोटी (क्रोडा क्रोड) पल्योपम का एक सागरोपम होता है और पल्योपम की व्याख्या पृष्ठ 4 पर आगे दी गई है।

[illegible]

1 भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा का इतिहास भाग 1 [illegible] ज्ञानसुन्दर जी पृ. 18 से 62 ।

पल्योपम यह शब्द जैन शास्त्र का है, [illegible] पल्योपम [illegible] पल्य माने कुआ । जिसको कुए की उपमा देने में आवे उसको पल्योपम कहने में आता है । इस बात को समझाने में एक कुए का उदाहरण (दृष्टान्त) देने में आता है वह इस प्रकार है -

एक योजन लम्बा, चौड़ा और गहरा ऐसा एक कुआ हो अर्थात् चार गउ लम्बा, चार गउ चौड़ा और चार गउ गहरा ऐसा एक कुआ होवे । उसमें देवकुरु, उत्तरकुरु प्रदेश के भाव से सात दिवसीय युगलिक मनुष्यों के मुंडाये, हुए मस्तक बालों का एक से सात दिवस का एक-एक बाल के असंख्याते अति सूक्ष्म टुकड़े करके ठूंस-ठूंस करके कुए में ऐसी रीति से भरने में आवे कि उन भरे हुए कुए पर होकर चक्रवर्ती का छियानवे करोड़ पैदल लश्कर अर्थात् सारा सैन्य घूम जावे तो भी एक बाल जितनी इस कुए में जगह नहीं दीखे.

ऐसे इस कुए में से सौ सौ वर्ष में एक-एक बाल निकालते हुए और कुआ बाल से सर्वथा खाली होते हुए जो समय बीते, उसको 'एक पल्योपम' कहते हैं ।

इस प्रकार असंख्यात वर्षों का एक पल्यापम होता है । करोड़ से करोड़ संख्या से गुणा करने से जो संख्या आवे उसको कोटा कोटी कहने में आता है । ऐसे दस कोटा कोटी पल्योपम का एक सागरोपम होता है और दस कोटा कोटी सागरोपम का एक उत्सर्पिणी अथवा एक अवसर्पिणी काल होता है और उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणी दोनों काल को जोड़ने पर, अर्थात् 20 कोटा कोटी सागरोपम का एक काल चक्र होता है ।

[illegible]

[illegible] तीर्थंकर 2 श्री अजितनाथ, 3 श्री संभवनाथ, 4 श्री अभिनंदन, 5 श्री सुमतिनाथ, 6 श्री पद्मप्रभ, 7 श्री सुपार्श्वनाथ, 8 श्री चन्द्रप्रभ, 9 श्री सुविधिनाथ, 10 श्री शीतलनाथ, 11 श्री श्रेयांसनाथ, 12 श्री वासुपूज्य 13 श्री विमलनाथ, 14 श्री अनन्तनाथ, 15 श्री धर्मनाथ, 16 श्री शान्तिनाथ, 17 श्री कुन्थुनाथ, 18 श्री अरनाथ, 19 श्री मल्लिनाथ 20 श्री मुनिसुव्रत, 21 श्री नमिनाथ, 22 श्री नेमिनाथ, 23 श्री पार्श्वनाथ हुए जिनका विस्तार से वर्णन, कलिकाल-सर्वज्ञ आचार्य श्री हेमचन्द्र सूरिजी ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'त्रिषष्टि-शलाका पुरुष-चरित्र' में किया है। 2 से लेकर 21 तीर्थंकरों का काल प्रागैतिहासिक माना जाता है।

ऐतिहासिक काल :

22 वें तीर्थङ्कर भगवान् नेमिनाथ का जन्म श्रावण शुक्ला 5 आगरा के पास शौरीपुर में हुआ था; वह बालब्रह्मचारी थे। जब इनका विवाह उग्रसेन राजा की पुत्री राजुलमति के साथ होने वाला था तो हरिन पशुओं की पुकार सुनकर करुणार्द्र हो गये और सारथी को कह कर विवाह के रथ को फिरवा कर प्रव्रज्या (दीक्षा) ग्रहण कर ली—श्रावण शुक्ला 6 को, इस अव-सर्पिणी काल में दुपमा सुपमा चौथा आरा बहुत बीत जाने पर गिरनार पर्वत पर प्रभु आषाढ शुक्ला ८ को मोक्ष पधारे। इनकी कुल आयु 1000

1. श्री हिन्दी जैन कल्प सूत्र-प्रकाशक श्री आत्मानन्द जैन महासभा पंजाब जालन्धर शहर, प्रथम संस्करण, सन् 1948 पाना 116.।
2. वही, पाना 127.

र्प की थी। इनके पिता का नाम समुद्रविजय और माता का नाम शिवादेवी था। वसुदेव और कृष्ण इनके चचेरे भाई थे। महाभारत काल 1000 ईस्वी पूर्व माना जाता है और यही समय नेमि का ऐतिहासिक काल माना जाना चाहिये—वैदिक वाङ्मय में वेद पुराण के साहित्य में नेमि का उल्लेख देखने को मिलता है[1]।

23 वें तीर्थङ्कर श्री पार्श्वनाथ ऐतिहासिक महापुरुष माने जाते हैं, इनके समय में, उत्तर प्रदेश, बिहार इत्यादि प्रान्तों में जैन-धर्म सुप्रचलित था, पौष विद 10 वि. सं. पू. 820 (ई. सन्, पू. 877) को जन्म वाराणसी (बनारस) में अश्वसेन राजा की वामा नाम की रानी की कुक्षि से हुआ था। श्री पार्श्व कुमार जब युवावस्था में थे तब नगर के बाहर कमठ तापस की धुनी में अपने अवधिज्ञान से काष्ठ में जलते हुए सर्प को देख लिया तो तापस को दया बिना-धर्म, को करने से मना किया, लेकिन वह नहीं माना, इस पर पार्श्व कुमार ने प्रत्यक्ष रूप में, यज्ञ काष्ठ की लकड़ी को तुड़वा कर, सर्प को बाहर निकलवाया। भगवान् पार्श्वनाथ, अहिंसा-श्रमण संस्कृति-के अनुपालक थे, इनका निर्वाण 100 वर्ष की आयुष्य पूर्ण होने पर सम्मेत शिखर (दक्षिण बिहार से पार्श्वनाथ हिल) पर भगवान् महावीर के निर्वाण से 250 वर्ष पहले वि. सं. पू. 720 ई. सं. पू. 777 हुआ था, उनका धर्म चतुर्याम के नाम से प्रसिद्ध हुआ। पाली ग्रन्थों में इसका उल्लेख है। गौतम बुद्ध के चाचा वप्प शाक्य निर्गन्थ श्रावक थे। भगवान् महावीर के पिता सिद्धार्थ राजा भी, इसी परम्परा के अनुयायी थे। इस प्रकार, बुद्ध धर्म की स्थापना से पूर्व, श्रमण (निर्गन्थ) सम्प्रदाय काफी सुदृढ़ हो चुका था।

श्रमण भगवान् महावीर :

भगवान् महावीर का जन्म चैत्र शुक्ला 13 वि. सं. पू. 541 (ई. सं. पू. 598) बिहार के क्षत्रिय कुंड गांव में हुआ था; सिद्धार्थ राजा की त्रिशला क्षत्रियाणी की कुक्षि से जन्म लिया था, घर और नगर में धनादिक की वृद्धि होने से माता पिता ने इनका नाम 'वर्द्धमान' रखा और

1. "Jainism the oldest Living Religion : J. P. Jain P. 22

आदि ब्राह्मण भी अपने सैंकड़ों शिष्यों सहित आये जिनकी आत्मा सम्बन्धी विविध शंकाओं के निवारण होने के बाद वे अपने शिष्यों सहित दीक्षित हो गये। मुख्य ब्राह्मण पंडित ग्यारह थे जो गौतम गुणादि के नाम से 11 गणधर कहलाये। उन्होंने वीर प्रभु से ध्रौव्य, उत्पादक और व्ययात्मक त्रिपदी सुनकर बारह अंग और बारहवें दृष्टिवाद के अन्तर्गत, चौदह पूर्व रचे। सुधर्मा गणधर को सर्व मुनियों में मुख्य बना कर, गण की अनुज्ञा दी, जिसके कारण, सुधर्मा स्वामी से भगवान् महावीर की साधु परम्परा अद्यावधि चली आ रही है। इसी प्रकार, साध्वियों में प्रभु ने चन्दना (चन्दन बाला) को प्रवर्तिनी पद पर स्थापित किया जिनसे साध्वियों की परम्परा चली आ रही है।

भगवान् महावीर अपने केवल ज्ञान बाद 30 वर्ष और संसार में रहे और उस अवधि में 59 राजा जैनानुयायी बने और उनमें से कई एक राजा दीक्षा लेकर मोक्ष गये। प्रभु महावीर कौशांबी नगरी में मेंढक गांव में पधारे तो गोशाल उनके ही दीक्षित शिष्य ने उन पर तेजो लेश्या छोड़ी किन्तु अरिहन्त पर तेजो लेश्या का असर नहीं होने से वह उसी के शरीर में प्रवेश कर गई और वह मृत्यु को प्राप्त हुआ। भगवान् महावीर ने अंतिम देशना अपापा नगरी में, राजा हस्तिपाल के यहाँ पर दी। समवसरण में उपदेश देकर उसी हस्तिपाल राजा के शुल्क शाला (शाला) में, वीर प्रभु ने वि. सं. पू. 470 (ई. सं. पू. 527) कार्तिक कृष्णा की अमावस्या की अर्द्ध-रात्रि को अपना शरीर छोड़ा और निर्वाण पद पाया। महावीर भगवान् की कुल आयुष्य 72 वर्ष की थी। भाव दीपक के उच्छेद होने पर, सब राजाओं ने द्रव्य दीपक किये जब से लोगों में दीपोत्सव (दीवाली) प्रवर्तमान हुआ। जिस स्थान पर प्रभु का अन्तिम संस्कार (दाह-क्रिया) की गई वह स्थान 'पावापुरी' कहलाई। वह आज भी महान् जैन तीर्थ माना जाता है। निर्वाण के पूर्व तीन दिन तक, महावीर भगवान् ने 9 राजा लच्छवी जाति के और 9 राजा मल्लवी जाति के कुल 19 देशों के राजाओं को अखण्ड प्रवाह से उपदेश दिया था।

भगवान् महावीर के उपदेश :

विश्वोपकारी वीर परमात्मा ने, संसार के समस्त प्राणियों को, बिना किसी जाति भेद-भाव के उपदेश दिये थे। उनके उपदेशों में, जगत् के स्वरूप

(चित्तौड़गढ़) और नागौर में थी। जैसे लोंका शाह ने श्वेताम्बरों में मूर्ति पूजा को अमान्य ठहरा दिया वैसे ही दिगम्बर परम्परा में तारण स्वामी (वी. सं. 1975 से 2042—वि. सं. 1505 से 1572 - ई. सं. 1448 से 1515) ने मूर्ति का अमान्य घोषित किया। उन्होंने 'तारण-तरण' समाज की स्थापना की जो चैत्यालय (मन्दिर) के स्थान पर सरस्वती भवन और मूर्ति के स्थान पर शास्त्रों को विराजित करता है। वी. सं. 2200 वीं. (वि. सं. की 17 वीं.—ई. सं. की 17 वीं) सदी में भट्टारकों के विरुद्ध पंडित बनारसीदास ने शुद्धाम्नाय का प्रचार किया जो आगे चल कर, 'तेरह पंथ' के नाम से विख्यात हुआ और भट्टारकों का पुराना मार्ग 'बीस पंथ' कहा जाने लगा।

इस प्रकार भगवान् महावीर के निर्वाण के पश्चात्, जैन धर्म में कई भेद, मत, कुल, गण, गच्छ, संघ, पंथ, समयानुकूल होते गये, और विधिविधान में भी कई परिवर्तन आये। फिर भी 2500 वां निर्वाण महोत्सव सर्वाधिक जैन सम्प्रदायों ने मिल कर, देश और विदेश में जैन धर्म के सिद्धान्तों और भगवान् महावीर के उपदेशों का प्रचार कर उत्साह पूर्वक मनाया, वह प्रभुत्वपूर्ण और देदीप्यमान है। मत मतान्तर और गच्छ भेद पर दृष्टिपात नहीं करते हुए वीर निर्वाण के बाद जो जैन धर्म का विकास और विस्तार हुआ, उसका उल्लेख संक्षिप्त में मुख्य घटनाओं के साथ किया जाता है।

भगवान् महावीर की परंपरा का 2500 वर्षों का सिंहावलोकन

वीर संवत् 1 से 1000

महावीर शासन का अभ्युदय पहले पूर्व देश में होकर उसका विकास अनुक्रम से उत्तर भारत और पश्चिम भारत तथा दक्षिण की तरफ हुआ और राजपूताना तथा गुजरात में विस्तृत हुआ। वीर संवत् की 10 वीं (विक्रम की 5 वीं सदी) में गुजरात में जैनियों का प्रसार प्रारम्भ हुआ और वीर संवत् की 17 वीं तथा 18 वीं (वि. सं. की 12 वीं तथा 13 वीं) सदी तक गुर्जर भूमि जैन धर्म का मुख्य स्थल बना।

वीर संवत् 1 (वि. सं. पू. 470 ई. सन् पू. 527) में जिस रात्रि को भगवान् महावीर का निर्वाण हुआ उस रात्रि के पिछले भाग में उनके प्रथम

भगवान श्री गौतम स्वामी [illegible] वी. सं. 12 (वि. स. पू. 458 — ई. स. पू. 515) में निर्वाण पधारे।

1. पंचम गणधर श्री सुधर्मा स्वामी (वी. सं. 1 से 20 तक वि. स. पू. 470 से 450 ई. स. पू. 527 से 507) इनके द्वारा प्रवर्तमान किया हुआ गच्छ का नाम 'निर्ग्रन्थ' पड़ा जो आठ पाट तक चला।

सुधर्मा स्वामी जैन शासन के सबसे ज्योतिर्धर थे। हिंसा के निवारण के लिए भगीरथ प्रयत्न किया। उन्होंने 12 आगमों की रचना की। भगवान महावीर और श्री सुधर्मा स्वामी के काल में, काशी कोशल आदि 16 महा-राज्य लिच्छवी विदेही और मल्ल तीन गणतन्त्र राज्य थे। लिच्छवी से जुड़े 9 संघों का एक संघ राजा था जिसकी राजधानी विशाला थी, जिसका मुख्य नायक महाराजा चेटक भगवान् महावीर के मामा थे। महाराजा चेटक और लिच्छवी राजा परम जैन थे। विदेही की राजधानी मिथिला थी। भगवान महावीर ने 12 चातुर्मास विशाला में और 6 चातुर्मास मिथिला में किये। मध्य भारत में उस समय कुल मिला कर 7707 गण राज्य थे। वीर संवत् 1 में अवन्ती नगरी (उज्जैन) के चन्द्र प्रद्योत राजा के पौत्र पालक का राज्या-भिषेक हुआ और इस राज्य का वी. सं. 60 (वि. सं. पू. 410—ई. स. पू. 467) में उच्छेद होकर नव नन्द राज्य की स्थापना हुई जो वी. सं. 215 (वि. सं. 255-ई. स. पू. 312) तक चला। तत्कालीन पार्श्वनाथ संतानीय श्री केशी गणधर थे जिन्होंने महावीर स्वामी के शासन में प्रवेश कर अपने श्रमण संघ का नाम 'पार्श्वपात्य' रखा। इस गच्छ से वी. सं. 70 (वि. सं. 400-ई. स. पू. 457) के करीब उपकेशगच्छ का प्रादुर्भाव हुआ जिसके छठे आचार्य श्री रत्न प्रभु सूरि बड़े प्रभावशाली हुए। उनके उपदेश से राजा उहड़ और उनके मन्त्री ने जैन धर्म अंगीकार किया। वे ओसिया (उपकेशपुर) के थे जिससे 'ओसवाल' कहलाये। आचार्य श्री रत्न प्रभु सूरि ने 1 लाख 80 हजार व्यक्तियों को जैन बनाए और श्री-माल नगर (भिन्नमाल) में श्री-माली जैन बनाये। वी. सं. 84 (वि. सं. पू. 386-ई. स. पू. 443) में स्वर्गवास के बाद उनके शिष्य श्री यक्षदेवसूरि ने, अपने उपदेश से सम्भवतः बंगाल में जैन बनाये वे 'सराक' कहलाये जो आज भी

धर्म के अनुयायी माने जाते हैं । भगवान् महावीर और सुधर्मास्वामी के
…न में क्षत्रिय कुंड, ऋजु-बालुका, राजगृही, पावापुरी, तीर्थ स्थान बने ।
…र्मास्वामी अपने 100 वर्ष का आयुष्य पूर्ण कर और निर्वाण से 20 वर्ष
…द (अर्थात् वि. सं. पू. 450-ई-स. पू. 507) मोक्ष गये । वी. सं. 84
…वि. सं. पू. 386-ई. स. पू. 443 ई.) का बरली शिलालेख मिला है
…समें किसी जनपद की राजधानी 'माध्यमिका' का जिक्र आया है । मध्या-
…का चित्तौड़ से 7 मील दूर 'नगरी' आधुनिक नाम से विख्यात है और
…ध्यमिका तथा चित्रकूट (चित्तौड़) दोनों जैन धर्म के प्राचीन केन्द्र रहे
। पार्श्वनाथ परम्परा के 29 वें पट्टधर आ० देव गुप्तसूरि (शासन वी. सं.
827 से 840 वि. सं. 357 से 370) के चतुर्मास के बाद, माघ शुक्ला
5 को एक विराट जैन सम्मेलन हुआ था, जिसमें कई श्रमण एकत्रित हुए
… और करीब 1 लाख जैन श्रावक श्राविकाएँ थी । चित्तौड़ के राजा वैरसिंह
…भी सम्मिलित हुए थे ।[1]

2. <u>श्री जम्बू स्वामी</u> (वी. सं. 20 से 64—वि. सं पू. 450 से 406
ई. स. पू. 507 से सं. ई. पू. 463) दूसरे पट्टधर माने जाते हैं । सुधर्मास्वामी
के उपदेश से, ये जम्बुकुमार, आठ नवोढा विवाहित पत्नियों और विपुल धन
(99 करोड़ सोना मोहर) छोड़ कर साधु बने । ये अंतिम केवली और अंतिम
मोक्षगामी हुए हैं । वी. सं. 64 (वि. स. पू. 406--ई. स. पू. 463) में
मथुरा नगरी में उनका निर्वाण हुआ । ये चौदह पूर्वधर थे । उनके समय में,
तत्कालीन राजा सम्राट् श्रेणिक (बिम्बसार) कोणिक (अजातशत्रु), उदायी
और श्रेणिक के पुत्र अभयकुमार विद्यमान थे । भद्रेश्वर तीर्थ कच्छ प्रदेश में
तीर्थ स्थान माना जाने लगा ।

3. <u>श्री प्रभवस्वामी</u> (वी.सं. 64 से 75-वि. सं पू. 406 से 395--ई.
सं. पू. 463 से 452) ने श्री जम्बुकुमार और उनकी आठ स्त्रियों के संवाद
सुनकर, 499 चोरों के साथ जिनके ये सरदार थे, जैन धर्म में दीक्षा ग्रहण
की । ये महान् युग प्रधान थे । त्याग, तपस्या और संयम के धोरी थे । उनके

---

1. मुनि ज्ञान सुन्दर : 'भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा का इतिहास'-
जिल्द 1 पृष्ठ 785 ।

पर दक्षिण की ओर चले गये, परन्तु चन्द्रगिरि के पहाड़ पर पार्श्वनाथ बस्ती के कन्नडी शिलालेख से विवेचन मिलता है कि प्रथम भद्रबाहु दक्षिण में नहीं गये; किन्तु द्वितीय भद्रबाहु दक्षिण में पधारे।[1] आचार्य देवसेन सूरिजी वी. सं. 606 (वि. सं. 136—ई. स. 79) में श्वेताम्बर दिगम्बर भेद पड़ना मानते हैं और श्वेताम्बर मतानुयायी, आचार्य वज्र स्वामी के बाद वी. सं. 609 (वि. सं. 139—ई. सं. 82) में दूसरे भद्रबाहु के समय से मानते हैं।[2] दिगम्बर मत के अनुसार सुधर्मा स्वामी से भद्रबाहु की परम्परा में जम्बु, विष्णु, नन्दी, अपराजित गोवर्धन, को बीच में मानते हुए, उनका काल 162 वर्ष गिनते हैं। श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही उन्हें श्रुत-केवली स्वीकार करते हैं। चन्द्रगुप्त मौर्य राजा, भद्रबाहु के समकालीन माने जाते हैं। अन्तिम नंद राजा का उन्मूलन कर, चन्द्रगुप्त ने मगध देश पर राज्य स्थापित किया। अन्तिम अवस्था में राज-पाट छोड़ कर प्रभाचन्द के नाम से जैन साधु बने।[3]

8. श्री स्थूलभद्रजी (वी. सं. 170 से 215 वि. सं. पू. 300 से वि.सं.पू. 255; ई.सं. पू. 357 ई. सं. पू. 312) नवें नंद राजा के मंत्री शकटाल के पुत्र थे। गृहस्थपने में 4 मास वेश्या के घर में रहते हुए, अपने पिता की मृत्यु से, वैराग्य में तल्लीन होकर संसार छोड़कर सुधर्मास्वामी के शिष्य बन गये। ये दस पूर्व सार्थ और 4 पूर्व अर्थरहित जानते थे। उनके समय में 11 अंग तथा 14 पूर्व के ज्ञाता श्रमण पाटलीपुत्र पटना में, एकत्र हुए और उन्होंने कण्ठस्थ आगमों को लिपिबद्ध करने का महत्तम प्रयास किया। ये जैन जगत में महान् कामविजेता माने जाते हैं जिन्होंने, गृहस्थ जीवन में कोशा वेश्या की रंगशाला में अपना चातुर्मास विता कर, उसको प्रतिबोध किया। उन्होंने नंद वंश के अन्तिम राजाओं को भी जैन धर्म का उपासक बनाया। चन्द्रगुप्त का स्वर्गवास वी. सं. 230 (वि. सं. पू. 240—ई. स. पू. 297)

---

1. जैन सिद्धान्त भास्कर पृ. 25
2. जैन परम्परानो इतिहास भाग पहलो : लेखक त्रिपुटी महाराज पृ. 315-316
3. Vincent Smith's History of India Pp. 9-146.

श्रुति के आधार पर संप्रति के निर्माण कराये हुए माने जाते हैं जो वास्तव में जैन अशोक समझा जाता था।[1]

10. आर्य सुहस्ति सूरि के शिष्य आ० सुस्थित सूरि और आ० सुप्रतिबुद्ध सूरि थे जो काकन्दी नगरी के निवासी होकर सगे भाई थे। इनका काल वी. सं. 292 वि. सं. पू. 178 ई. स. पू. 235 से माना जाता है। उन्होंने उदयगिरि की पहाड़ी पर कोटि करोड़ बार सूरि मंत्र का जाप किया जिससे भगवान् महावीर के श्रमण, निर्ग्रंथ से कोटिकगच्छ प्रसिद्ध हुए।

वी. सं. 330 (वि. सं. पू. 140-ई. स. पू. 197) के बाद खारवेल कलिंग देश का महान् प्रतापी जैन सम्राट हुआ जिसने श्री बलिस्सह आदि 207 जिनकल्पी साधुओं और 100 अन्य साधुओं, कुल 300 साधुओं को कुमारगिरि पर एकत्र कर जैन साहित्य का पुनरुद्धार किया[2]। यह हाल उड़ीसा के खण्ड गिरि पर स्थित दूसरी शताब्दी के शिलालेख में पाया जाता है कि खारवेल ने मौर्यकाल से नष्ट हुए अंग उपांग के चौथाई भाग का पुनरुद्धार किया था।

वी. सं. 291 (वि. सं. पू. 179-ई. स. पू. 236) में आर्य सुहस्ति के स्वर्गवास के बाद आचार्य गुण सुन्दर जी को संघ का भार सौंपा गया. संप्रति की आ. गुण सुन्दरजी पर अगाध श्रद्धा थी जिनके कथन पर जैन संघ के लिये अविस्मरणीय कार्य किये गये। गुजराती इतिहास में लिखा है कि समूचा संप्रति साम्राज्य आ. गुणसुन्दरजी के इंगित पर संचालित होता था। यही कारण है कि उस समय देश अधिक से अधिक अहिंसा की प्रतिष्ठा कर सका। वी. सं. 335 (वि. सं. पू. 135 ई. स. पू. 192) में आ. गुणसुन्दरजी का स्वर्गवास हुआ।

---

1. "Almost all ancient Jain temples or monuments of unknown origin are ascribed by the voice to Samprati, who is in fact regarded as a Jain Ashoka."
   Smith's Early History of India p. 202
2. जैन परम्परा नो इतिहास, भाग 1 लो। लेखक मुनि श्री दर्शन ज्ञानन्याय विजयजी त्रिपुटी महाराज। पृ. 213

किया है।

श्रमणों ने अपने प्रवचनों से, बड़े-बड़े सम्राटों, राजाओं, महाराजाओं, राजनीतिज्ञों एवं साधारण जनता को जागृत कर, उनका आत्म कल्याण किया है। स्वयं श्रमण भगवान् महावीर ने, श्रेणिक, चेटक, प्रद्योत, उदायन आदि राजाओं आनन्द और कामदेव आदि [illegible], चंदनबाला और मृगावती आदि सतियों और पतित समझे जाने वाले लोगों तथा चंडकौशिक नाग को प्रतिबोधित कर उनका उद्धार किया है। भगवान महावीर की परम्परा में आचार्य सुहस्तिसूरि ने, सम्राट सम्प्रति को अपना अनुयायी बना कर, भारत के बाहर सुदूर प्रदेश में श्रमण संस्कृति का प्रचार किया है। कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्यजी ने गुजरात के राजा कुमारपाल को परमार्हत श्रमणोपासक बना कर, सारे राज्य में अमारि (अहिंसा) का ऐसा जबर्दस्त डंका बजवा दिया कि यूक जूं तक मारना निषेध था, महा प्रभावक आचार्य श्री हरि विजय सूरिजी ने अपने वचनामृत से, सम्राट अकबर को श्रद्धालु बना कर, जीव हिंसा निषेध के कई फरमान (पट्टे और परवाने) जारी करवाये। इतना ही नहीं, बादशाह अकबर जैन धर्म से इतना प्रभावित हुआ कि मांस मदिरा से परहेज करने लग गया। आधुनिक समय में स्व. आचार्य श्री आत्मारामजी ने, जैन स्नातक श्री वीरचन्द राघवजी को, कुछ महिनों तक, इस संस्कृति का अध्ययन करा, शिकागो, अमेरिका की विश्व धर्म परिषद् में भेज कर, विश्व में जैन धर्म की ख्याति प्रकट की। इस प्रकार कई श्रमणों और श्रमणियों ने, कई आत्माओं का जीवन सफल कर श्रमण संस्कृति को सुदृढ़ और सबल

बनाया है। जिनका समावेश इस छोटी पुस्तक में करना सम्भव नहीं है। यहाँ पर इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि उन्होंने अपने सदुपदेश से कई लोकोत्तर और महान् लोकोपकारी कार्य सम्पादन कराये हैं जो आज भी सुवर्णाक्षरों में अंकित हैं।

राजाओं और महाराजाओं को छोड़ कर, जैन मंत्रियों और जैन श्रमणों ने, अपनी लक्ष्मी का अटूट सद्व्यय कर, संसार में अलौकिक जैन मन्दिर देलवाड़ा आबू, राणकपुर, श्रवण बेलगोला आदि निर्माण करवाये है जो भारत की ही नहीं किन्तु विश्व की अमूल्य निधि हैं। ये अनुपम मन्दिर आत्मोत्थान के अमर स्रोत तो हैं ही साथ ही साथ वास्तु और स्थापत्य कला के क्षेत्र में, भी अद्वितीय और अजोड़ हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में, भगवान् महावीर के पूर्व, प्रख्यात तीर्थङ्करों और आचार्यों का सूक्ष्म वर्णन करते हुए, भगवान् महावीर के जीवन और उपदेश तथा उनकी परम्परा का 2500 वर्ष के इतिहास का सिंहावलोकन किया गया है इसके साथ भगवान् महावीर का 2500वाँ निर्वाण महोत्सव जो राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर मनाया गया, उसका भी संक्षिप्त वर्णन किया गया है। अन्त में, अर्बुद-गिरि (आबू पर्वत स्थित भगवान् महावीर 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव समिति के कार्य विवरण का भी समावेश किया गया है जिसके द्वारा यह पुस्तक प्रकाशित की गई है।

स्थानाभाव के कारण, इस पुस्तक में, संभव है कि कुछ प्रभावक श्रमणों और श्रमणियों तथा श्रावक और श्राविकाओं का उल्लेख करना रह गया है, फिर भी आशा करता हूँ कि यह लघु पुस्तक, जैन इतिहास के जिज्ञासुओं के लिये परिचयात्मक और लाभदायक सिद्ध होगी और भविष्य में भी वृहद् इतिहास लिखने के लिए प्रेरणास्पद बनेगी। विषय की विशालता और गहनता को दृष्टि में रखते हुए, पुस्तक रचना में त्रुटियाँ और गल्तियाँ रहना संभव है। जिनको विद्वान् पाठक क्षमा करेंगे और भूल-सुधार के सुझाव देंगे तो उसकी आगामी संस्करण में क्षति पूर्ति की जा सकेगी। इस पुस्तक लिखने में, मुझे जिन ग्रन्थों और पुस्तकों से सहायता प्राप्त हुई, उसके प्रणेताओं और

सूरि हुए जिनके समय में दूसरे कालकाचार्य और हुए जिन्होंने अपनी बहन सरस्वती के साथ जैन दीक्षा ग्रहण की। सरस्वती साध्वी का अति रूपवती होने से उज्जैन के राजा गर्द भिल्ल ने अपहरण किया। कालकाचार्य ने ईरान से शाही राजाओं को बुलवा कर गर्द-भिल्ल को परास्त करा अपनी बहन साध्वी को छुड़वाकर प्रायश्चित देकर शुद्ध किया। शाही राजा जो शक कहलाये गर्द भिल्ल वी. सं. 453-466 (वि. सं. पू. 17—वि. सं. पू. 4, ई. सं. पू. 74—ई. सं. पू. 61) को हरा कर उज्जैन पर वि. सं. 466 से 470 (वि. सं. पू. 4 से वि. सं. पू. 1—ई. सं. पू. 61 से ई. सं. पू. 58) तक राज्य किया। शक संवत् भी उन्होंने चलाया था। तदनन्तर कालकाचार्य के भाणेज बलमित्र—भानुमित्र—अवन्तिपति बना जो विक्रमादित्य के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इन्होंने ही विक्रम संवत् चलाया जो वीर निर्वाण संवत् 470 (ई. स. पू. 57) की घटना है।[1] कालकाचार्य ने विक्रमादित्य प्रतिष्ठानपुर (पालनपुर) के राजा सात वाहन को और ईरान के शकों को प्रतिबोध कर जैन धर्म का उपदेश दिया। कालकाचार्य वी सं. 460 (वि.-सं. पू. 10 – ई. स पू 67) के लगभग स्वर्ग सिधारे। राजा विक्रमादित्य ने शत्रुंजय का विशाल संघ निकाला जिन बिम्ब भराये और जैन मन्दिर भी बनवाये थे। तीसरे कालकाचार्य और हुए जिन्होंने प्रतिष्ठान पुर में सम्राट् शालिवाहन की विनती पर पर्युषण संवत्सरी भादवा शुद 5 से भादवा शुद 4 को कायम की जो आज भी मानी जाती है।[2] इनका समय वीर संवत् की पाँचवी सदी (वि. सं. 400 से 453 वि. सं. पू. 70 से वि. सं. पू. 17—ई. सं. पू. 127 से ई. सं. पू. 74) मानते हैं। कोई इनका समय वि. सं. 993 (वि. सं. पू. 523 ई. सं. पू. 466) मानते हैं। महाराजा विक्रम के उज्जयिनी की राजगद्दी पर आसीन

---

1. 'जैन परम्परा नो इतिहास'--भाग 1 लो लेखक : त्रिपुटी महाराज। पृ. 224 से 225
2. 'जैन परम्परा नो इतिहास' भाग 1 लो, लेखक त्रिपुटी महाराज पृ. 226-227

वी. सं. 500 (वि. सं. 30—ई. सं. पू. 27) के आस-पास आचार्य विमल सूरि ने प्राकृत में प्रसिद्ध ग्रन्थ 'पउम चरियं' जैन रामायण की रचना की। आचार्य वज्र स्वामी के शिष्य आचार्य वज्रसेन सूरि (वी. सं. 584 से 620—वि. सं. 114 से 150, ई. सं. 57 से 93) हुए। उनके समय में फिर 12 वर्ष का दुष्काल पड़ने पर आचार्य वज्रसेन सूरि दक्षिण में सोपारक पधारे जहाँ पर सेठ जिनदत्त और सेठानी ईश्वरी के चार पुत्र 1. नागेन्द्र, 2. चन्द्र, 3. निवृत्ति व 4. विद्याधर ने वी. सं. 592 (वि. सं. 122—ई. सं. 95) में दीक्षा ग्रहण की। दुष्काल मिटने पर इन आचार्य के समय में मन्दसौर में तीसरी आगम वाचना आचार्य नन्दिल सूरि व आचार्य रक्षित सूरि स्वर्गवास वी. सं. 597 (वि. सं. 127—ई. सं. 70) के संयोजकत्व में हुआ। और आगमों को चार अनुयोग 1. द्रव्यानुयोग (दृष्टिवाद) 2. चरणानुयोग (11 अंग, छेद, सूत्र महाकल्प उपांग, मूल सूत्र) 3. गणितानुयोग (सूर्य प्रज्ञप्ति चन्द्र प्रज्ञप्ति) और 4. धर्म कथानुयोग (ऋषिभाषित उत्तराध्ययन) में विभाजित किया गया। आज इन अनुयोगों के प्रमाण से, आगमों का अध्ययन और अध्यापन होता है। दिगम्बर मतानुसार आचार्य

---

1. वही, पृ. 236 से 241

वी. सं. 1001 से वी. सं. 2000 तक

वी. सं. 1010 (वि. सं. 540-ई. स. 483) में मेवाड़ के राजा अल्लट का होना माना जाता है, जो उदयपुर से 2 मील आहाड़ में जाकर रहे। उनके वंशज 'आहाड़िया' कहलाये जाने लगे। अल्लट के पूर्वज, भर्तृभट्ट के वंशज वाप्पा रावल थे। वाप्पा रावल ने चित्तौड़ पर मान मोरी को हरा कर वी. सं. 1036 (वि. सं. 566-ई. सं. 509 के लगभग) मेवाड़ का राज्य स्थापित किया था।[2] वाप्पा रावल के पूर्वज, वी. सं. 845 (वि. सं. 375-ई. सं. 318) में वल्लभी के भंग होने पर मेवाड़ आये थे और वल्लभी के राजा आद्य शिलादित्य के वंशज थे जिसमें से राजा गुहसेन-गुहिल (गुफा में जन्म होने से) के नाम से 'गहलोत' भी कहलाये। ये राजा

1. जैन धर्म का इतिहास-लेखक मुनि श्री सुशीलकुमार जी। पृ. 159 से 175
2. जैन परम्परा नो इतिहास (भाग 1 लो) लेखक त्रिपुटी महाराज। पृ.358
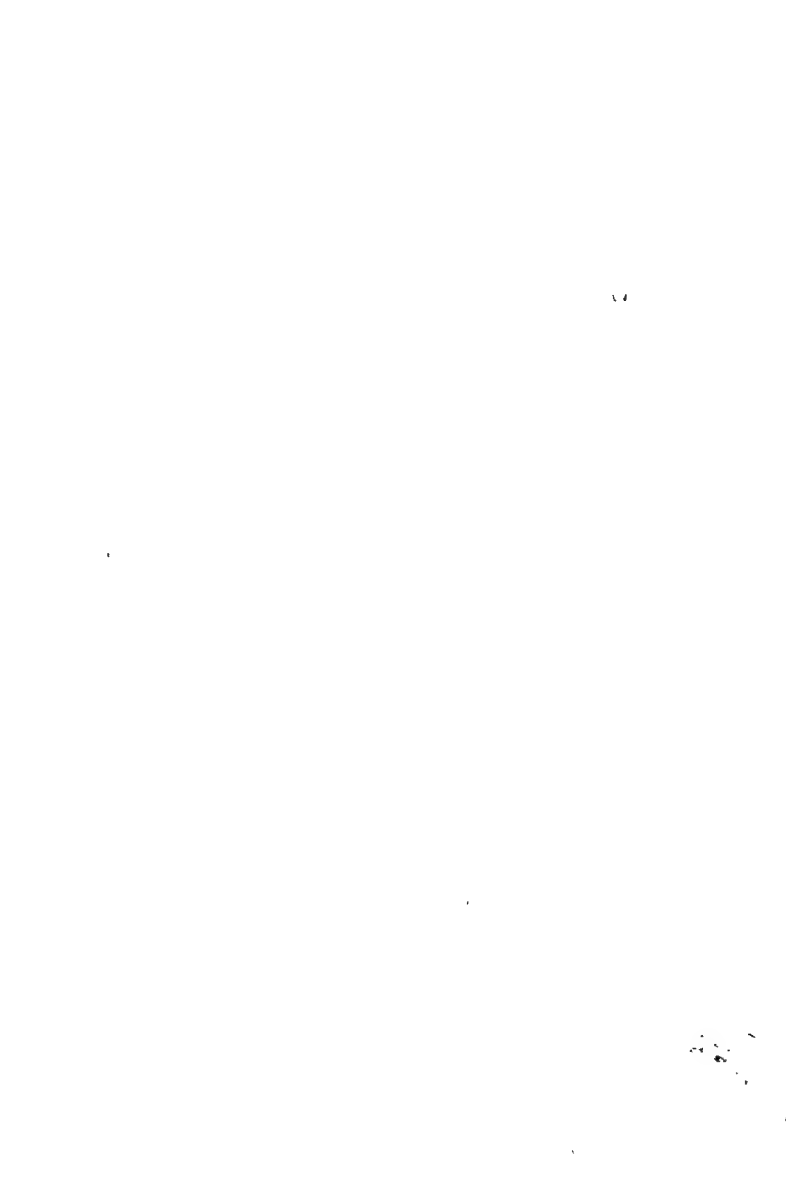
हेमचन्द्राचार्य और कुमारपाल :

वीर संवत् की 17 वीं सदी (विक्रम की 12 वीं सदी) में कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य हुए जिनका जन्म वी. सं. 1615 (वि. सं. 1145-ई. स. 1088) और स्वर्गवास वी. सं. 1699 (वि. स. 1229-ई. स. 1172) में हुआ था। वे प्रख्यात जैनाचार्य, विद्या के अनुपम भंडार और एक 'जंगम विश्व-विद्यालय' माने जाते हैं। उनका प्रभाव गुजरात के राजा कुमारपाल पर अत्यधिक था। राजा कुमारपाल जैन धर्म के महान् प्रभावक हुए और 'परमार्हत' उपाधि से प्रसिद्ध हुए, अपने राज्य में पूरी अमारि (जीव हिंसा निषेध) की घोषणा कराई यहां तक कि यूका (जूं) मारना भी अपराध गिना जाता था। राजा कुमारपाल की विशाल हृदयता और आचार्य श्री की संस्कृति का प्रभाव, गुजरात की अस्मिता और भारतवर्ष के इतिहास में अमिट अलंकार के रूप में प्रसिद्ध रहेगी।[1]

हेमचन्द्राचार्य, अनेक ग्रन्थों के भी रचयिता थे। उन्होंने तीन कोटि करोड़ श्लोक प्रमाण साहित्य की रचना की। 'सिद्ध-हेम-शब्दा-नुशासन' नाम से असाधारण प्रतिभा पूर्ण नवीन व्याकरण के रचयिता थे। शब्दानु-शासन के साथ-साथ छन्दानुशासन, काव्यानुशासन और लिंगानुशासन की रचना की थी। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'कुमारपाल चरित्र' (प्राकृत), 'द्वाश्रय' महाकाव्य (संस्कृत) अभिधान चिंतामणि, त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित्र, योग शास्त्र, प्रमाण मीमांसा, अध्यात्मोपनिषद्, वीतरागस्तोत्र, सप्तसंधान, परिशिष्ट-पर्व आदि कई ग्रन्थों का निर्माण किया। पिटर्सन ने आचार्य हेमचन्द्र को ज्ञान का समुद्र कहा है।[2]

वीर संवत् की 17वीं (वि. सं. की 12वीं) सदी में विधि पक्ष प्रवर्तक आ. श्री जिनवल्लभसूरि हुए जिन्होंने चैत्य का त्याग कर नवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरि से पुनः दीक्षा ली। वी. सं. 1634 (वि. स. 1164—ई. स. 1107) में अपना काव्य संघ-पट्टक चित्तौड़ के जिन मन्दिर की दीवार पर

---

1 जैन धर्म का इतिहास, मुनि श्री सुशीलकुमारजी. पृ. 240

2 'Acharya Hemchandra is the ocean of knowledge. Peterson

वस्तुपाल तेजपाल गुजरात के राजा वीरधवल के मंत्री थे जिन्होंने जैन धर्मों के आदर्शों को मान कर सम्पूर्ण जनता की समानता-पूर्वक सेवा की। वी. सं. 1758(वि. सं. 1288-ई. स. 1231)में विश्व-विख्यात लूण वसहि के नाम से विशाल कलामय संगमरमर के मन्दिर का निर्माण कराया। इसके निर्माण में 12 करोड़ 53 लाख का सद्व्यय होने का अनुमान किया जाता है। इस मन्दिर में भगवान् नेमिनाथ की कसौटी की जिन प्रतिमा की प्रतिष्ठा उनके गुरु विजयसेन सूरि और उदयप्रभसूरि द्वारा कराई गई थी। विश्व के इतिहास में जन सेवा के कार्यों में अटूट द्रव्य का व्यय करने वाले महापुरुष विरले ही मिलेंगे। वस्तुपाल, अनुपम दानवीर, अद्वितीय प्रजापालक, और कुशल महा मंत्री था। वह वीर योद्धा नीति-निपुण, कला-प्रेमी और साहित्य-रसिक महाकवि था।[1] आ. उदयप्रभ सूरि ने 'संघपति-चरित्र' और 'सुकृत-कीर्ति-कल्लोलिनी' ग्रंथ लिखे हैं। वे और विजय सेन सूरि प्राचीन अपभ्रंश गुजराती के उत्तम रचनाकार गिने जाते हैं।

वीर संवत् 1783 से 1785 (वि. सं 1313 से 1315-ई. स. 1256 से 1258) में भारत के तीन वर्षीय दुष्काल में जैन श्रावक कच्छ देशीय भद्रेश्वर का श्रीमाली सेठ जगड्डुशाह ने मगध से गुजरात व गुजरात से राजस्थान प्रदेश तक के दुष्काल पीड़ितों के लिए इतना अन्न वितरण किया कि इस महापुरुष का आदर्श अमर हो गया। उन्होंने एतदर्थ 112 दान-शालाएं और पानी के लिए प्याऊएं खोलीं व 'जगजीवन हार जगड्ड' कहलाए।[2]

वी. सं. की 19वीं शताब्दी (वि. सं. की 15वीं शताब्दी) में देवेन्द्र सूरि आचार्य हो चुके हैं। उन्होंने 'कर्म-ग्रन्थ' और 'श्राद्ध दिनकृत्यादि' अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। उनके सदुपदेश से मेवाड़ के वीर केसरी समरसिंह और उनकी माता जयतुल्ल देवी ने चित्तौड़ पर 'श्याम पार्श्वनाथ का मन्दिर' निर्माण

---

1 'जैन परम्परा नो इतिहास' '(भाग तीजो) लेखक त्रिपुटी महाराज पृ. 305 से 308

'Jainism in Rajasthan' Dr. K. C. Jain. p. 214-218

2 वही पृ. 311,

वी. सं. 1978 (वि. सं. 1508—ई सं. 1451) में लुंकामत (जो बाद में ढूंढक (खोज) वृत्ति के कारण ढूंढिया पन्थ कहलाया) लोंकाशाह ने प्रवृत किया। लोंकाशाह, यति ज्ञानसुन्दरजी के पास लहिया शास्त्रों की हस्तलिखित प्रतियाँ बनाने वाले थे। उन्होंने अकाल पीड़ितों की तन, मन, धन से सेवा की और एक आदर्श गृहस्थ माने जाते थे। जैन धर्म के मूल तथ्य की खोज करके जिन प्रतिमोत्थापन में विश्वास रखते हुए दया धर्म का प्रचार श्रावक लखमशी और भाणजी की सहायता से किया। वी सं. 2001 (वि. सं. 1531—ई. सं. 1474) से गुण पूजक धर्म विस्तार प्राप्त करने लगा। लोंकागच्छ (लोंकामत) के प्रथम वेशधारी साधु भाणजी हुए और जिससे वी. सं. 2003 (वि. सं 1533—ई. सं 147०) में वेशधरों की उत्पत्ति हुई। लोंकाशाह के 400 शिष्य थे। वी सं. 2038 (वि. सं. 1568—ई. सं. 1511) में लोंकागच्छीय वेशधारी रूपजी, वी. सं 2048 (वि. सं. 1578—ई. सं. 1521) में लुंपक वेशधारी जीवाजी ऋषि, वी. सं. 2057 (वि. सं 1587—ई. सं. 1530) में लुंपक मती वृद्ध वर सिंहजी, वी सं. 2076 (वि. सं. 1606—ई सं. 1549) में लुंकामत के वृद्ध वर सिंहजी प्रसिद्ध हुए हैं। लोंकागच्छ का शनैः शनैः देश में प्रचार हुआ। गुजराती लोंकागच्छ, बड़ौदा, सौराष्ट्र, गुजरात तथा कच्छ में विस्तृत हुआ, नागौरी लोंकागच्छ, राजस्थान, देहली प्रदेश में फैला और उत्तरार्द्ध, पंजाब, पेप्सु, पश्चिमी पंजाब (पाकिस्तान), उत्तर प्रदेश में प्रसारित हुआ। इस मत के पूज्य पांच 1 पू० जीवराजजी, 2 पू० श्री लवजी ऋषि, 3. पू० श्री धर्मसिंहजी, 4. पू० श्री धर्मदासजी और 5 पू० श्री हरजी ऋषि हुए हैं जिनका और उनके मुख्य शिष्यों का वर्णन आगे किया जावेगा। वी सं. 2040 (वि. सं 1570—ई सं. 1513) में लोंकागच्छ से बीजा नाम के रूप धर से, बीजा-मत की उत्पत्ति हुई जिसको 'विजय-गच्छ' कहने लगे।

आधुनिक काल (वीर सं. 2001 से वीर सं. 2500 तक)

वी. सं. 1001 से वी. सं. 2000 (वि सं 531 से वि. सं. 1530—ई. सं. 474 से ई. स. 1473) तक के लम्बे समय में जैन धर्म के इतिहास में, कई जैन तीर्थों की स्थापना हुई और प्राकृत, संस्कृत और अपभ्रंश

श्री हीर विजय सूरि प्रकाण्ड और प्रख्यात जैन श्रमण हुए जिनको बादशाह अकबर ने 'जगद्गुरु' के विरुद से अलंकृत किया। आ. श्री हीर विजय सूरि का जन्म वी.सं. 2053 वि.सं. 1583 ई.स. 1526 और दीक्षा वी. सं. 2066 वि. सं. 1596 ई. स. 1539 में हुई। अकबर बादशाह ने आगरा में जब चंपा श्राविका के छह महीने की तपस्या करने पर बहुमान करने के लिये वरघोड़ा (धार्मिक जैन जुलूस) देखा तो उनकी श्राविका चंपा के गुरु आ. हीर विजय सूरि के दर्शन करने की जिज्ञासा जागृत हुई। उन्होंने आचार्य श्री को गुजरात से फतहपुर सीकरी बुलाया। जहाँ पर प्रथम दर्शन होने पर बादशाह बहुत प्रभावित हुआ। उस समय आचार्य श्री के साथ 67 मुनि थे और उनमें प्रमुख महोपाध्याय शान्तिचन्द्र गणि और महो. भानुचन्द्र गणि थे। 4 वर्ष तक अकबर को आचार्य श्री ने फतहपुर विराज कर धर्मोपदेश सुनाया और जैन शासन के लिये पशु पक्षियों का शिकार, मांसाहार आदि बन्द कराया यहाँ तक कि स्वयं सम्राट अकबर ने जो प्रातः 500 चिड़ियों की जिह्वाओं का कलेवा करता था यह बन्द कर दिया। छः महीने तक के लिए अमारि (अहिंसा) का फरमान आचार्य श्री ने निकलवाया तथा अन्य भी जैन तीर्थ सम्बन्धी अनुज्ञा-पत्र जारी कराये और जजिया कर माफ कराया। वी. सं. 2110 (वि. सं. 1640-ई. स. 1583) में फतहपुर सीकरी में श्री हीर विजय सूरि के शिष्य पं. भानुचन्द्र गणि को 'महोपाध्याय' का विरुद दिया। कहा जाता है कि अन्त में अकबर ने आचार्य श्री के उपदेश से मांसाहार भी बन्द कर दिया। इस विषय में प्रसिद्ध इतिहासकार विंसेन्ट ए. स्मिथ के शब्द उद्धृत करना उपयुक्त होगा।

"उसने मांसाहार बहुत कम कर दिया और करीब करीब उसका उपभोग बिल्कुल छोड़ दिया। अपने जीवन के पिछले वर्षों में जब वह जैन प्रभाव में आया।"

"किन्तु जैन साधु ने निःसन्देह, वर्षों तक लगातार अकबर को उपदेश सुनाये जिससे उसके चरित्र पर भारी प्रभाव पड़ा और उन्होंने उनके

आ. हीर विजय सूरि की तरह आ. जिनचन्द्र सूरि (खरतरगच्छ) ने भी फरमान जारी कराये सम्राट् अकबर से, जिनसे उनका उपदेश लाहोर में सुना था। इसी प्रकार बादशाह अकबर ने आ. विजयसेन सूरि को लाहोर में बुलवाकर धर्मोपदेश सुने और काली-सरस्वती का उनको विरुद भी दिया। उनका स्वर्गवास वी. सं 2141 (वि. सं. 1671 - ई. स 1614) में हुआ था। उन्होंने 4 लाख जिन बिंबों की प्रतिष्ठा की और प्रसिद्ध जैन तीर्थ तारंगा शंखेश्वर, सिद्धाचल, पंचासर, राणकपुर, कुंभारियाजी, बीजापुर आदि तीर्थों का जीर्णोद्धार अपने समय में करवाया था।

सम्राट् जहांगीर ने मांडवगढ़ में आ. विजयदेव सूरि को बुलवा कर उनके उपदेश से प्रसन्न होकर, "जहांगिरि महा तपा" के विरुद से उन्हें अलंकृत किया। इसी प्रकार मेवाड़ के राणा जगतसिंह प्रथम वी सं. 2098—(वि सं 1628-ई स. 1571 से वी. सं. 2122-वि सं. 1652-ई. स. 1595) ने उदयपुर में धर्मोपदेश उनसे सुनकर वरकाणा पार्श्वनाथ के मेले के दिन पोष विद 10 के अवसर पर यात्री-कर माफ किया, राज्याभिषेक दिवस, जन्म मास और भाद्रपद में जीव हिंसा बन्द की, प्रसिद्ध पीछोला और उदयसागर झीलों में मछलियों का पकड़ना रोका और मचिंद दुर्ग पर राणा कुंभा द्वारा निर्माण कराये हुए चैत्यालय का पुनरुद्धार किया।[1]

वी सं. 2202 (वि. सं. 1732-ई. स. 1675) में मेवाड़ के राणा राजसिंह के मन्त्री दयाल शाह ने राज नगर में दयाल शाह का किला तीर्थ का निर्माण कराया और उसमें चतुर्मुख भगवान आदीश्वरजी की मूर्तियों की प्रतिष्ठा कराई।

आचार्य विजयसेन सूरि के प्रशिष्य श्री केसर कुशल ने औरंगजेब बादशाह के पुत्र बहादुरशाह और दक्षिण के सूबा नवाब महम्मद युसुफखान को प्रतिबोध कर, दक्षिण में प्रसिद्ध कुल्पाक तीर्थ का जीर्णोद्धार करवाया। विजयदेव सूरि आचार्य के प्रशिष्य आ. विजयरत्न सूरि ने वी. सं. 2234 (वि सं. 1764-ई. स. 1707) में नागौर के राणा अमरसिंह को और

1 'श्री तपागच्छ श्रमण वंश वृक्ष' (पुस्तकाकार बीजी आवृत्ति गुजराती) जयन्तीलाल छोटालाल अहमदाबाद पृ. 60 से 62।

एक जैन स्नातक-को भेज कर निश्व में जैन धर्म की प्रसिद्धि की। वे विल बुद्धि के धनी और अपूर्व अभ्यास शक्तिधारी थे। संप्रदाय, मत-मतांत जुदा पड़ कर पंजाब में सद् धर्म की प्ररूपणा की। 'जैन तत्त्वादर्श,' 'अज्ञ तिमिर-भास्कर' 'चिकागो प्रश्नोत्तर' आदि सुन्दर ग्रन्थों की रचना क पाश्चात्य विद्वानों पर इनकी प्रतिभा की अजीब छाप पड़ी थी। वी. 2423 (वि. सं. 1953-ई. स. 1893) में उनका स्वर्गवास हुआ। पंज केशरी श्री विजय वल्लभ सूरिजी को वी. सं. 2414 (वि. सं. 1944- स. 1887) में 22 साधुओं सहित दीक्षा दी थी।

श्री विजयदान सूरिजी (दीक्षा वी. सं. 2416-वि. सं. 1946-ई. स 1889. और स्वर्गवास वी. सं. 2462-वि. सं. 1992-ई. स. 1935 आधुनिक श्रमण इतिहास में अग्रगण्य माने जाते हैं। व्याकरण, काव ज्योतिष, न्याय के निपुण विद्वान् थे और श्री वल्लभसूरिजी शिक्षा औ कला के प्रेमी तथा समाज-सुधारक आचार्य हुए जिन्होंने बम्बई में महावीर जैन विद्यालय स्थापित किया। उनका स्वप्न जैन-विश्वविद्यालय स्थापि करने का था, जो साकार नहीं हो सका। फिर भी उन्होंने पंजाब में विस्त धर्म प्रचार किया और कई शिक्षण संस्थाएं उनके उपदेश से स्थापित हुईं।

आचार्य विजय नीति सूरिजी एक संगठन प्रेमी आचार्य हो गये हैं। उन्होंने चित्तौड़गढ़ के तीर्थ 'सतवीस देवरा' का उद्धार कराया। इनके अतिरिक्त श्री विजय लब्धि सूरिजी, श्री विजय यतीन सूरिजी, श्री लक्ष्मण सूरिजी, श्री विजयप्रेम सूरिजी, श्री विजय लावण्य सूरिजी, त्रिपुटी महाराज—जी दर्शन ज्ञान न्याय—विजयजी—आदि विशिष्ट श्रमण हो चुके हैं जिन्होंने जैन साहित्य क्षेत्र में अनेक आवश्यक सेवाएं प्रदान कर जैन शासन की प्रभावना की है। शास्त्र विशारद आ. विजयधर्म सूरिजी के विद्वान् शिष्य रत्न-मुनि न्याय विजयजी, मुनि विद्या विजयजी, मुनि जयन्त विजयजी ने भी कई पुस्तकें लिख कर जैन साहित्य की सेवा की है। पुरातत्त्व विद् श्री पुण्यविजयजी, मुनि श्री जिनविजयजी, श्री कल्याणविजयजी को भी भूला नहीं जा सकता जिन्होंने प्राचीन जैन शास्त्रों का गहन अध्ययन कर अपनी टीकाएं लिखी हैं। भारत प्रसिद्ध जैसलमेर जैन ज्ञान भण्डार के ताड़

वि. सं 1500 से पूर्व की रचनाएं मिलती हैं । विस्तृत साहित्य सब भा...
में मिलता है परन्तु हिन्दी में विशेष है । हिन्दी में दीपचन्द कासलीवाल ने
सं. 18 वी सदी में, 'चिद्विलास' और 'आत्मावलोकन', 19वी सदी वि...
पं. दौलतराम ने पद्मपुराण, आदि पुराण और श्रीपाल चरित, पं. टोड...
ने गोमट्टसार, लब्धिसार, क्षपणा-सार की भाषा टीका 46000 श...
परिमाण में लिखी थी । पं. सदासुख ने 'रत्न-करण्ड' (श्रावकाचार) 'तत्व...
सूत्र भाष्य' और 'भगवती आराधना' लिखी ।

दिगम्बर आम्नाय में भी वनवासी मूल-संघ और चैत्यवासी द्रा...
संघ, मुख्य माने जाते हैं । वी. सं. 2042 (वि. सं. 1572—ई. सं. 151...
के पूर्व, तारण स्वामी ने तीसरा 'तारण संघ' सेमर खेड़ी गांव (भूत पूर्व टो...
राज्य के अन्तर्गत) में स्थापित किया और 14 शास्त्रों का निर्माण किया...
जिन पूजा के विरोध में शास्त्र पूजा शुरू की । श्वेताम्बरों के यतियों की तर...
दिगम्बर में भी भट्टारक प्रथा का प्रादुर्भाव हुआ वी. सं. 1689 (वि. सं...
1219—ई. सं. 1162) में । आ. हेम कीर्त्ति के शिष्य चारुनन्दि ने, दिल्ली
के बादशाह के कहने से वस्त्र-धारण किया तब से इस संस्था का प्रादुर्भाव
हुआ । उनके अनुयायी शिष्य 'बीस पंथी' कहलाए । भ. हेम कीर्त्ति और सक...
कीर्त्ति इत्यादि परम्परा वाली ईडर के भट्टारकों वाली पट्टावली मिलती
है । भट्टारकों की गादी राजस्थान में चित्तौड़, नागौर आदि स्थानों पर
प्रसिद्ध गिनी जाती थी । भट्टारक श्रमण धन का उपयोग भी करने लग
गये थे ।

भट्टारकों के शैथिल्य की प्रतिक्रिया हुई कर्म ग्रन्थों और कुन्द-कुन्दा-
चार्य, आ. अमृतचन्द्र, सोमदेव आदि के अध्यात्म ग्रन्थों के अभ्यासी विद्वा...
व्यक्ति, उन लोगों को अनादर की दृष्टि से देखने लगे और स्वयं अध्यात्मी
कहे जाने लगे । अध्यात्म विद्वानों की परम्परा में, आगरा के दशा श्रीमाली
पं. बनारसीदास, चतुर्भुज, भगवतीलाल, कुमारपाल और धर्मदासजी, वी. सं.
2150 (वि. सं. 1680—ई. सं. 1623) में 'तेरह पंथ' चलाया जिसका
अपर नाम 'बनारसी मत' है क्योंकि इस परम्परा को पं. बनारसीदास से
विशेष बल मिला । इस मत के स्थापित होने पर, भट्टारक अपने आप को

जैन साहित्य में अपना योगदान दिया। इनका साहित्य 'भिक्षु रत्ना... पुस्तक में संकलित है। आचार्य भीषणजी निपुण और कुशाग्र बुद्धि वाले...

2. तेरा पंथ के दूसरे आचार्य भारमलजी (वी. सं. 2330 से 23... वि. सं. 1860 से 1878—ई. स. 1803 से 1821) हुए जिन्होंने मेवा... मारवाड़, ढूँढाई और हाड़ौती में इस पंथ का प्रचार और प्रसार किया... वे सुदृढ़ अनुभवी शासक हो गये हैं।

3. तीसरे आचार्य रायचन्दजी 'ऋषिराय' (वी. सं. 2348 ... 2378—वि. सं. 1878 से 1908—ई. स. 1821 से 185) हुए जिन्होंने अपना क्षेत्र मेवाड़, मारवाड़, ढूँढाड़ आदि प्रदेशों से आगे माल... गुजरात, सौराष्ट्र और कच्छ तक बढ़ाया। वे धर्म चर्चा में विशेष रुचि रख... थे एवं तपस्या प्रेरक सन्त थे। आगमों का अर्थ सहित अध्ययन किया था... सरस व्याख्याता भी थे।

4. चौथे आचार्य जीतमलजी जयाचार्य (वी. सं. 2378 से 240... वि. सं 1908 से 1938 ई. स. 1851 से 1881) थे जिनका समय तेरा पंथ का निर्माण काल माना जाता है। उनके समय में तेरा पंथ का सर्वतोमुखी विकास हुआ। सब सिंघाड़ों (छोटे सम्प्रदायों) की पुस्तकों को मंगवा कर समान वितीर्ण किया और तेरा पंथ के श्रमणों की मर्यादाओं का वर्गीकरण किया। ये प्रभावशाली आचार्य हुए हैं और उनके उपदेश से मेवाड़ के महाराणा शंभुसिंहजी एवं युवराज जवानसिंहजी पर अच्छा प्रभाव हुआ। इनका समस्त जीवन श्रुत उपासना में बीता। 3 लाख पद्य प्रमाण साहित्य... आगमों की 'जोड़' पद्य टीका कर जैन शासन को उपकृत किया। भक्ति... [illegible] रचीं जिनमें तीर्थङ्करों की स्तुतियाँ, 'लघु चौबीसी' ... [illegible] प्रसिद्ध है। उनका विहार क्षेत्र, मारवाड़, मेवाड़, माल... ढूँढाड़ हाड़ौती, गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ, हरियाणा, दिल्ली प्रदेश रहा।

5. पाँचवें आचार्य श्री माधव गणि (वी. सं. 2408 से 2419— वि. स. 1938 से 1949—ई. स. 1881 से 1892) थे। वे अपनी ... [illegible], [illegible] भावना, स्थिर बुद्धि से सर्व प्रिय हो गये ... [illegible] संस्कृत के प्रथम विद्वान् और जैनागमों के गुरुतर ...

थे। मेवाड़ के तत्कालीन महाराणा फतहसिंहजी ने उदयपुर में सांवलदासजी की वाड़ी में उनके दर्शन किये थे।

6. छठे आचार्य श्री माणक गणि (वी. सं. 2419 से 2424—वि. सं 1949 से 1954—ई. स. 1892 से 1897) हुए जो दयालु, उदारमन और देशाटन की तीव्र रुचि वाले सन्त थे। उनका विहार क्षेत्र मेवाड़, मारवाड़, ढूंढाड़, थली हरियाणा आदि रहा है। उन्होंने अपना जीवन सैद्धान्तिक ज्ञान अर्जित करने में व्यतीत किया और संस्कृत विकास की ओर ध्यान दिया।

7. सातवें आचार्य श्री डाल गणि (वी. सं. 2424 से 2436—वि सं.1954 से 1966 ई.स. 1897 से 1909 माने)जाते हैं जो कच्छ के श्री पूज्य तरीके प्रसिद्ध हुए। वे सिद्धान्तवादी, निर्भीक और तेजस्वी आचार्य थे। उनका विहार अधिकतर थली (बीकानेर) मारवाड़, मेवाड़, ढूंढाड़, मालवा, गुजरात, कच्छ आदि प्रदेशों में हुआ। उन्होंने पालीताणा जाकर शत्रुञ्जय की यात्रा भी की थी।

8 आठवें आचार्य श्री कालू गणि(वी.सं 2436 से 2462— वि. सं. 1966 से 1992—ई स 1909 से 1935), पुण्यवान् प्रभावशाली न्यायवादी हुए हैं जिनका जन्म शताब्दी समारोह वि सं 2033 में मनाया गया था। तेरापंथ के लिये उनका शासनकाल स्वर्णिम काल गिना जाता है। उनके समय में, पुस्तक भण्डार, श्रमण संघ, श्रावक वर्ग, कला विज्ञान उपकरण व लिपि का विकास और विस्तार हुआ। भारत में सर्व क्षेत्रों में साधु भेजकर तेरा पंथ का प्रचार व प्रसार किया। उनका विहार क्षेत्र थली, मेवाड़ मारवाड़, ढूंढाड़, पंजाब, हरियाणा माना जाता है। ये संस्कृत विद्या के वट-वृक्ष थे और उनकी कृति 'भिक्षु शब्दानुशासन' प्रसिद्ध ग्रंथ के रूप में प्रकट हुई। यही नहीं स्वयं अध्ययन करते थे और अध्यापन कराते भी थे। बालक साधुओं के भावी जीवन के निर्माणकर्त्ता थे। वे स्वमत परमत सिद्धान्तों के मर्मज्ञ और काव्यप्रेमी भी थे। उन्होंने तेरा पंथ समाज की भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति की। तेरा पंथ को ये मातृ वात्सल्य पूर्ण आचार्य मिले।

सम्पादन किया। जैन ही नहीं जैनेतरों ने भी सहयोग दिया। भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री फखरुद्दीन अली अहमद और तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने केन्द्रीय स्तर पर और राज्यपालों और मुख्यमन्त्रियों ने राज्य स्तर पर तथा जिलाधीशों ने जिला स्तर पर, सारे देश में इस महोत्सव हेतु समितियों का संयोजन कर, प्रोत्साहित किया और उदार दिल से आर्थिक सहायता भी प्रदान की। यहीं नहीं अमेरिका, इंग्लैण्ड और अन्य देशों में जहाँ भारत के राजदूतालय स्थित हैं, भगवान महावीर का 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव शानदार तरीके से मनाया गया।

उपलब्धियाँ :

वर्ष भर में विविध कार्यक्रम मनाये गये किन्तु 13-11-1974 निर्वाण दिवस से आठ दिन तक बड़ी धूम-धाम रही जिसका सारांश रूप में विवरण इस प्रकार है—

1. देश के अनेक स्थानों पर सार्वजनिक सभाएँ, प्रवचन, भाषण, शोभा यात्रा, प्रभात-फेरियाँ, स्नात्र-महोत्सव, महापूजन आदि का आयोजन हुआ।
2. भगवान महावीर सम्बन्धी निबन्ध, चित्रकला, संगीत आदि साहित्यिक और [illegible] कार्यक्रम हुए और पुरस्कार स्पर्धा रखी गई जिनमें [illegible] पुरस्कार [illegible] की निर्वाण महासमिति ने 8000 रुपयों का [illegible] किया।
3. [illegible] स्थानों पर जैन संस्कृति, तत्त्वज्ञान, इतिहास, शिल्प, स्थापत्य आदि विषयों पर ज्ञान गोष्ठियाँ, परिसंवाद, [illegible] सम्मेलन, [illegible], प्रदर्शनियाँ आदि का संयोजन किया गया। [illegible] [illegible] और [illegible] पर [illegible] आदि [illegible]

यावज्जीवन कारावास की सजा में परिवर्तन करने आदि के विशेष आदेश कुछ राज्यों में जारी किये गये।

लोकोपकारी कई कार्य हुए जिनमें से अशक्तों को भोजन, बालकों को मिठाई, अस्पताल के रोगियों को फल, अंधजनों को वस्त्र और धन दान एवं विकलांगों की सहायता करना मुख्य है।

निर्वाण महोत्सव की स्मृति में चांदी के सिक्के भी बनाये गये और बिहार में पावापुरी के जैन मन्दिर भगवान् महावीर का निर्वाण स्थल की छाप वाला डाक टिकट जारी किया गया।

देश में भगवान् महावीर के नाम की शिक्षण संस्थाएं स्थापित हुई और कुछ विश्वविद्यालयों में जैन शोध-संस्थान भी खोले गये तथा सार्वजनिक पुस्तकालय, वाचनालय और संग्रहालय में महावीर कक्ष कायम किये गये।

सैकड़ों की संख्या में भगवान् महावीर और जैन धर्म के विषय पर पुस्तकें, चित्र-संग्रह, अनेकानेक सामयिक समृद्ध और सचित्र विशेषांक और स्मारिकाएं प्रकाशित की गईं।

आकाशवाणी (आल इण्डिया रेडियो) पर जैन स्तवन, भजन, भाषण सुनाये गये और जैन तीर्थ सम्बन्धी दस्तावेजी (डोक्यूमेण्ट्री) फिल्में भी बनीं।

10. देश भर में भगवान् महावीर का 'धर्मचक्र' घूमा और कई नगरों, कस्बों और गांवों में धर्म-चक्र की शोभा यात्राएं निकलीं जिसमें सहस्रों नर-नारियों ने भगवान् महावीर की जय बोली। जैन मन्दिरों, उपाश्रयों और स्थानकों में तप, जप, ध्यान के अनुष्ठान सम्पादित हुए।

11 जैन-धर्म के अलग-अलग सम्प्रदायों में भाईचारा और सहकार को प्रोत्साहन देने के लिये एक जैन-प्रतीक[1] और एक जैन-ध्वज[2] प्रचलित किया गया और सर्व सम्प्रदायों के श्रमणों का मान्यता प्राप्त जैन धर्म का

1 जैन-प्रतीक के महत्व के लिये परिशिष्ट 3 पृ. 75-76 देखें।
2 जैन-ध्वज की विशिष्टता के लिए परिशिष्ट 5 पृ. 86 अवलोकन करें।

सार रूप ग्रन्थ मूल प्राकृत, संस्कृत और हिन्दी भाषा में प्रकाशित जिसका नाम 'समरण-सुत्त' रखा गया।

12. बिहार राज्य में श्रमण श्री अमर मुनि की प्रेरणा से राजगृ 'वीरायतन' और राजस्थान के लाडनूं में आचार्य श्री तुलसी ग उपदेश से 'जैन विश्व भारती', पंजाब में महावीर फाउण्डेशन, अ में अहिंसा समाज आदि चिर स्थायी संस्थाओं के स्थापित किये ज निर्णय लिये गये और कहीं कहीं उनका कार्य भी प्रारम्भ हो ग केन्द्र और राज्य सरकारों ने एतदर्थ धन, भूमि आदि देकर सह प्रदान की।

भगवान् महावीर के उपदेश केवल जैनियों के लिये ही नहीं थे विश्व के समस्त प्राणियों के उपकार के लिये थे। अतः उनके धर्मोपदेश विविध प्रकार से व्याख्यानों, भाषणों द्वारा प्रचार किया गया। कुछ स्था पर, उनके सदुपदेश महावीर-स्तम्भ निर्माण किये जाकर उनके शिलापट्ट अंकित किये गये। विशाल जन-समूह ने भक्ति-भरी और भाव-भीनी श्रद्धांज अर्पित करते हुए भगवान् महावीर के 2500 वां निर्वाण महोत्सव को सजी सार्थक और सफल बनाया। इस वर्ष से भिन्न-भिन्न राज्यों में जो कार्य कि गये और किये जाने के संकल्प लिये गये, उनका सूक्ष्म अवलोकन आगे कि जाता है।

विविध राज्यों में महावीर निर्वाण महोत्सव—

सर्व प्रथम दिल्ली भारत की राजधानी से प्रारम्भ करते हैं। भूतपू राष्ट्रपति स्व. श्री फखरुद्दीन अली अहमद ने 13 नवम्बर 1974 के दि भगवान् महावीर की अन्तिम चरण स्पर्शित पावन भूमि, पावापुरी के जल मन्दिर की प्रतिकृति वाला स्मारक डाक टिकट का उद्घाटन किया। राष्ट्रभवन के प्रसिद्ध अशोका हॉल में, भगवान् महावीर के 2500 वां निर्वाण कल्याणक महोत्सव का मंगल प्रारम्भ किया। उद्घाटन समारम्भ में राष्ट्रपति ने कहा कि भगवान् महावीर ने अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकान्त और सहिष्णुता का मार्ग बतलाया, जिस पर चलने से ही अपनी समस्याओं का समाधान हो सकता है। [illegible] किया गया। 13 नवम्बर को ध्वजारोहण, जिस

रिषद्, 15 को श्रमण संस्कृति परिषद्, 18 को निर्वाणवादी विचार-रा के योगदान पर संविवाद, 19 को अनेकान्त परिषद् और 20 को वी विकास योजनाएं दीक्षा समारम्भ आदि विविध कार्यक्रम हुए।

भगवान् महावीर के 2500 वां निर्वाण कल्याणक के ऐतिहासिक ार मंगल दिवस के दिन: भूत-पूर्व प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने ारतीय संस्कृति के ही नहीं, विश्व के ज्योतिर्धर परमतारक तीर्थंकर परमात्मा गवान् श्रीमहावीर स्वामी की भावभीनी वन्दना करते हुए कहा कि आज से ढाई जार वर्ष पहले भगवान् महावीर ने जो सत्य की शोध की वह आज भी उतनी सत्य है। दिनांक 17-11-74 को दिल्ली के रामलीला मैदान पर दो लाख दियों की भारी सभा का आयोजन हुआ। इस सभा की अध्यक्षता श्रीमती न्दिरा गांधी एवं दो लाख जनसमूह का, अखिल भारतीय निर्वाण महोत्सव समिति के प्रमुख सेठ श्री कस्तूरभाई लालभाई ने स्वागत किया। सेठ श्री के वागत भाषण और भूतपूर्व बड़े प्रधान के प्रवचन के बाद, आ. श्री विजय-मुद्रसूरिजी, आ. श्री तुलसीजी, आ. श्री धर्मसागरजी, उपाध्याय श्री विद्या-न्द मुनिजी ने अपने-अपने प्रवचनों में भगवान् महावीर का गुणानुवाद िया। श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अध्यक्ष-पद से बोलते हुए कहा कि धर्म के ति अपनी श्रद्धा के लिये, दूसरे क्या कहेंगे इनकी चिन्ता नहीं करना चाहिये और अपने को अपने मार्ग पर ही चलते रहना चाहिये। भगवान् महावीर ने अहिंसा, अपरिग्रह और सत्य को सबसे अधिक महत्व दिया था। आधुनिकता और विज्ञान की नई जगमगाहट में भी, जीवन में स्थायी शान्ति और विश्व-कल्याण के लिये, उनके सिद्धान्त, आज भी उतने ही मूल्यवान् हैं। उन्होंने और कहा कि सहिष्णुता भारतीय संस्कृति की महान् और सबसे बड़ी देन है। भगवान् महावीर ने अहिंसा को परमधर्म माना था। महात्मा गांधी तक, यही विचार सर्वोपरि रहा है। भगवान् महावीर को अपनी श्रद्धांजलि अहिंसा के मार्ग पर चलने का व्रत लेकर ही अर्पण कर सकते हैं। महा-समिति के कार्याध्यक्ष साहु श्री शान्तिप्रसाद जैन ने आभार वादन किया और श्रीमती इन्दिरा गांधी को श्री अमलानन्द घोष संपादित 'जैन कला और स्थापत्य' नाम का बहुमूल्य ग्रन्थ भेंट दिया। 16 नवम्बर 1974 को 7 मील

[illegible]
जिन धर्म संगीत [illegible] स्थापित करने के निर्णय लिये गये।

आन्ध्र प्रदेश हैदराबाद में 20 करोड़ के व्यय से निर्मित कराये जाने वाले महावीर [illegible] ([illegible]) का शिलान्यास किया गया जिसमें [illegible] हॉस्पिटल, [illegible], [illegible] और [illegible] रहेगा।

आसाम की राजधानी गोहाटी (गौहाटी) में 3 लाख का भगवान महावीर बाल उद्यान, 2 लाख रुपये का दिगम्बर महावीर भवन बनाये जाने का निश्चय हुआ।

बिहार में 2500 वां निर्वाण दिवस के दिन जल मन्दिर में निर्वाण मोदक चढ़ाने की बोली 1 लाख 51 हजार की श्री [illegible] दिल्ली वाले की हुई और उन्होंने सबसे प्रथम निर्वाण लड्डू चढ़ाया। इस अवसर पर पावापुरी में, 1 लाख रुपये से अधिक यात्री एकत्रित हुए थे और 10 नवम्बर को श्री आर. डी. भण्डारे तत्कालीन राज्यपाल बिहार ने निर्वाणोत्सव का उद्घाटन किया और उपाध्याय श्री अमरमुनि,अनुयोगाचार्य श्री कान्तिसागरजी, मुनि श्री रूपचन्दजी आदि श्रमणों और प्रिय दर्शना श्रीजी, शशि प्रभाश्रीजी, महासती श्री चन्दनाजी आदि श्रमणियों ने भगवान् महावीर का गुणानुवादन किया। राजगृही में 15 नवम्बर को भव्यरथ-यात्रा निकली जिस पर आकाश से पुष्प-वृष्टि की गई। वीरायतन की वस्त्रदान, नेत्रदान और विद्या-दान की योजनाएं बनाई गई।

पश्चिम बंगाल में श्री विजयकुमार बनर्जी (भूतपूर्व, विधान सभा अध्यक्ष) की अध्यक्षता में सार्वजनिक सभा हुई जिसमें उन्होंने कहा कि महात्मा

दिवस की घोषणा हुई। राजधानी पणजी में मन्दिर तथा संयुक्त सभा-गृह के लिये बिना मूल्य-राज्य सरकार ने जमीन दी, आम सभा में बड़ी संख्या में ईसाई भाई सम्मिलित हुए।

उत्तर प्रदेश में सबसे बड़ा कार्य जो राज्य सरकार ने किया वह यह है कि 13 नवम्बर 1974 के बाद अदालतों ने 13 नवम्बर 1974 या उसके बाद देहांत, फाँसी की सजा देवें तो उसको साधारण किस्मों को अपवाद मान कर देहान्त दण्ड की सजा को आजीवन कैद की सजा में बदलने का आदेश भारत सरकार की स्वीकृति लेकर प्रचलित किया। बरेली और हरिद्वार में महावीर स्मृति केन्द्र के भवन के लिये बिना मूल्य जमीन राज्य सरकार उत्तर प्रदेश ने प्रदान की। उत्तर प्रदेश की राजधानी, लखनऊ में 'महावीर उद्यान और स्मारक' तथा 'महावीर स्मृति केन्द्र', आगरा में 'महावीर-पार्क' व 'महावीर ओडिटोरियम' और 'पक्षी-चिकित्सालय' बनाना निश्चित किया तथा फिरोजाबाद में 45 फीट ऊँची श्री बाहुबलीजी की मूर्ति स्थापित की गई।

हिमाचल प्रदेश में भी प्रार्थना प्रवचन और विविध कार्यक्रम हुए।

हरियाणा राज्य में, हरिजनों के लिये छात्रालय, जगधारी में 'जैन गर्ल्स हाई स्कूल', करनाल में 'महावीर थियेटर' और गुडगांव में 'महावीर पार्क' निर्माण की योजना स्वीकृत हुई।

जम्मू व कश्मीर में श्री शेख अब्दुल्ला मुख्यमन्त्री ने महावीर जयन्ती महोत्सव के भाषण में, भगवान महावीर को महान धार्मिक और सामाजिक नेता मानते हुए, न्याय और समानता का नैतिक मूल्यों का प्रचारक बतलाया। जम्मू में 23 मई सन् 1975 के दिन आ. श्री समुद्रसूरिजी के वरद् हस्त से नव निर्मित जिनालय में मूलनायक श्री महावीर स्वामी की मूर्ति की प्रतिष्ठा हुई। राज्य में महावीर जयन्ती के दो दिन ड्राई डे रहा यानी शराब बिक्री बन्द रही।

कर्णाटक राज्य के विश्वविद्यालय में जैन चेयर और 'आध्यात्मिक विचारधारा में जैन धर्म की उपादेयता' पर संवाद (जिसमें देश विदेश के

नागालैण्ड के दीमापुर में 'भगवान महावीर पार्क' और पार्क संगमरमर का कीर्तिस्तम्भ निर्माण हुआ।

उड़ीसा में 'अहिंसा दर्शी समाज' की रचना हुई जिसमें 5 नियम स्वीकार किये गये।

(1) जीवन भर माँसाहार न करना।
(2) दारू न पीना और न जुआ खेलना।
(3) सदाचारी रहना और अहिंसात्मक व्यवहार रखने का प्रयत्न करना।
(4) रोज 10 मिनट या यथा-शक्ति समय तक आत्म निरीक्षण करना।
(5) सर्व धर्म समन्वय की भावना के विकास व प्रचार के लिए सम्पूर्ण साथ देना।

पंजाब में जिलों के बड़े-बड़े स्थान पर कीर्ति स्तम्भ बनाये जाने का निश्चय हुआ। चण्डीगढ़ में दहेज-प्रथा रोकने के लिए युवा वृद्धों ने प्रतिज्ञा ली और आत्मानन्द जैन महासभा द्वारा, लगभग 10 लाख के खर्चे पर महावीर पब्लिक स्कूल और 'जैन अमर होस्टल' का निर्माण हो रहा है। पंजाब सरकार ने 'महावीर ओपन थियेटर' के लिये 10 हजार का अनुदान दिया और राज्य में 25 महावीर स्कूल भी बना रही है। इसके अतिरिक्त 13 दिसम्बर 1974 के दिन या इससे पहले या उस दिन जिनको मृत्यु दण्ड मिला है, उसको (सिवाय उन अभियोगी के जो पेराग्राफ 3 में दिये गये हैं) आजीवन कारावास में परिवर्तित करने की घोषणा की। इसके अतिरिक्त भी राज्य में कई शुभ कार्य हुए जो 'लोर्ड महावीर फाउण्डेशन' द्वारा सम्पादन हुए।

राजस्थान राज्य में 3500 कैदियों की सजा में कमी की और 4 को मृत्यु दण्ड की सजा माफकर आजीवन कैद में बदली। निर्वाण वर्ष शान्ति वर्ष घोषित हुआ। 30 जिला पुस्तकालयों में, तीन विश्वविद्यालयों में, पुस्तकालय सहित महावीर कक्ष खोले गये और इसी प्रकार 8 राजकीय संग्रहालयों में महावीर कक्ष की स्थापना का आदेश जारी किया गया। विश्वविद्यालय उदयपुर और राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर में जैन चेयर की

वचन हुआ और काबुल राजदूतालय के अधिकारी श्री ए. के. जैन ने 'जैन र्शन की आज के युग में सार्थकता' विषय पर व्याख्यान दिया। इस सभा काबुल के भारतीय बड़ी संख्या में उपस्थित रहे थे। नेपाल के काठमाण्डु , जैन धर्म के चारों संप्रदाय की संयुक्त जैन परिषद् की स्थापना हुई और ारों सम्प्रदाय ने मिलकर पर्युषण पर्व की आराधना की। 13 नवम्बर, 1974 निर्वाण दिवस के दिन आध्यात्मिक कार्यक्रम से निर्वाण महोत्सव ा शुभारम्भ हुआ। भारतीय सहयोग मिशन सर्वे ट्रेनिंग स्कूल के प्राध्यापक ी वी. आर. जैन ने जैन दर्शन के मुख्य सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या करते ए जीवन में उतारने का अनुरोध किया और भगवान महावीर के जन्म ल्याणक प्रसंग पर मुनि श्री पूनमचन्दजी आदि के सान्निध्य में सभा हुई सका उद्घाटन, नेपाल के प्रधानमंत्री श्री नगेन्द्रप्रसाद रिजालजी ने या। इस सभा में जैन बौद्ध भिक्षु, सनातन धर्म के धर्म गुरु वरिष्ठ नेता र स्थानीय नेपाली जनता बड़ी संख्या में उपस्थित थी।[1]

भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति, माउण्ट आबू

अन्त में माउण्ट आबू पर जो निर्वाण समिति की रचना हुई और सके द्वारा यह पुस्तक प्रकाशित हुई, उसका परिचय और निर्वाण वर्ष में म्पादित कार्य का संक्षिप्त विवरण देना भी प्रासंगिक होगा। इस समिति ी स्थापना दिनांक 29-12-74 को हुई। सर्वानुमति से श्री के. एम लुंडिया तत्कालीन उपनिदेशक, पर्यटन विभाग, आबू, अध्यक्ष, श्री रामचन्द्र न उपाध्यक्ष और श्री जोधसिंह मेहता मुख्य मैनेजर श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर लवाड़ा, मंत्री नियुक्त हुए।

समिति द्वारा कई कार्य विविध प्रकार के सम्पादित हुए जिसका क्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

---

1. भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव—माहिती विशेषांक (गुजराती) प्रकाशक जैन साप्ताहिक पत्रवा, पादर देवली रोड, भावनगर, मूल्य रु 15 : 00, सन् 1976।

ज्ञान प्रसार की दिशा में, [illegible] आगमिक पाठ[illegible] आबू के विशाल भवन में डा. प्रेमसुमन, प्राध्यापक प्राकृत संस्कृत विभा[ग] उदयपुर विश्वविद्यालय का दिनांक 17-2-75 के दिन, 'आधुनिक परिवे[श] में भगवान् महावीर' पर सरल, स्पष्ट और सुसंस्कृत हिन्दी भाषा में सार्वजनि[क] भाषण हुआ। दिनांक 24-3-75 को 'जीवन और धर्म' पर मुनिराज श्री भद्रगुप्त विजयजी का प्रवचन देलवाड़ा जैन मन्दिर श्री वल्लभ लाइब्रेरी में हुआ उसका लाभ समिति के सदस्यों ने उठाया और इसी प्रकार भगवा[न्] महावीर जन्म कल्याणक दिवस चैत्र सुदी 13 तदनुसार 24-4-75 को राजपूताना क्लब माउण्ट आबू में मुनिराज श्री जिनप्रभ विजयजी का सार्वजनिक भाषण हुआ जो कि भगवान् महावीर जन्म कल्याण महोत्सव समिति आबू और नवपद आराधक समिति, शिवगंज ने 'भगवान् महावीर स्वामी और उनके सिद्धान्त' पर आयोजित किया उसका लाभ भी समिति के सदस्यों ने लिया। इस सार्वजनिक सभा में तत्कालीन उपजिलाधीश श्री श्यामसुन्दर श्रीवास्तव, भूतपूर्व सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस श्री उम्मेदसिंहजी, राजकीय अधिकारी एवं आबू के प्रतिष्ठित नागरिक श्रीमती कुर्मी मेहरवानजी और श्री कान्तीलाल उपाध्याय सेकेट्री लायन्स क्लब सहित बड़ी संख्या में जनता उपस्थित थी। दिनांक 24-4-75 को विश्व विख्यात देलवाड़ा जैन मन्दिर से प्रसिद्ध नक्खी झील तक, विशाल और भव्य वरघोड़ा (शोभा यात्रा) निकला जिसमें सर्व सम्प्रदाय विशेषकर जैन संघ सम्मिलित था। आबू में इतना महान् वरघोड़ा पहली बार यहाँ की जनता ने देखा और बड़ा हर्षोल्लास अनुभव किया।

समिति ने भगवान् महावीर आधुनिक युग पर निवन्ध प्रतियोगिता भी आयोजित की और उसमें प्रथम पुरस्कार निर्भयकुमार गंगवाल, कुचामन सिटी को 25 रुपया, द्वितीय पुरस्कार 15 रुपया का श्री प्रकाशनन्द जैन गुडगांव छावनी हरियाणा को और तृतीय पुरस्कार सुश्री सन्तोषकुमारी सेठ फतहपुर सिटी को 10 रुपये का भेंट किया गया। मंत्री श्री जोधसिंह मेहता ने 'राजस्थान के प्रमुख (श्वेताम्बर) जैन मन्दिर' और 'विश्व विख्यात देलवाड़ा जैन मन्दिर' पर लेख लिखे जो क्रमशः जिनवाणी पत्रिका जयपुर और जैन संस्कृति और राजस्थान विशेषांक' और भगवान् महावीर स्मृति ग्रन्थ सन्मति ज्ञान प्रसारक मण्डल शोलापुर में प्रकाशित हो चुके हैं।

समिति द्वारा नक्खी झील पर नगरपालिका आबू द्वारा प्रदत्त चट्टान
म पर एक सुन्दर कलात्मक भगवान् महावीर स्तंभ का रुपया 17001) में
ल्पी श्री काशीराम वी. दवे से निर्माण कराया गया जिसका उद्घाटन
कालीन जिलाधीश श्री तुलसीराम अग्रवाल ने दिनांक 12-11-75 ई. को
धिवत् किया। इस संगमरमर के स्तंभ के एक ओर जैन प्रतीक और तीन
र मूल प्राकृत, हिन्दी गुजराती और अंग्रेजी में भगवान् महावीर के
र्मोपदेशक अङ्कित कराये गये। पर्यटन स्थल होने से हजारों यात्री इस
मुख स्थान पर आकर भगवान् महावीर की वाणी को पढ़ते हैं और लाभ
ठाते हैं, समिति ने भगवान् महावीर स्तम्भ को, सुरक्षा और संरक्षण
मित्त नगरपालिका माउण्ट आबू को, उद्घाटन के अवसर पर अर्पण
र दिया।

समिति ने जीव रक्षा, पशु शिकार और वन रक्षा, हरे वृक्ष कटाई
विरोध में आबू पर साइन बोर्ड लगाये और स्थानीय ब्लाइण्ड स्कूल के
ध जनों को गर्म स्वेटर तथा जनरल हास्पिटल के रोगियों को ऊनी कम्बलें
ी इस वर्ष में वितरण की गई।

समिति ने गत महावीर जन्म कल्याणक दिवस महावीर जयन्ती चैत्र
शुक्ला 13 वि. सं. 2034 दिनांक 2-4-1977 ई. को नगरपालिका
माउण्ट आबू के पुस्तकालय में माउण्ट आबू की समाज सेविका श्रीमती कूमी
मेहरबानजी के वरद् हस्तों से 'भगवान् महावीर कक्ष' का उद्घाटन कराया।
इस कक्ष हेतु, शान्ति सदन ट्रस्ट की ओर से 5000 रुपये एवं समिति की
238)25 रुपये की सहायता मिली जिससे पुस्तकें, अलमारियाँ आदि खरीदी
गई। भगवान् महावीर के जीवन, उपदेश और सिद्धान्त पर, हिन्दी,
अंग्रेजी में आधुनिक ढङ्ग की पुस्तकों का कुछ साहित्य उपलब्ध कराया
गया है।

समिति को भगवान् महावीर स्तंभ निर्माण कराने और विविध
प्रवृतियों के संचालन में जैन यात्रियों, प्रमुख जैन भाईयों, प्रमुख जैन संस्थाओं,
जयपुर के धनी मानी व्यक्तियों और श्री शान्तिदेव सेवा समिति बम्बई से
विशिष्ट धन राशि भेंट में मिली है, जिसके लिये समिति के
आभार मानते हैं। यदि विशेष सहयोग नहीं मिलता तो
आबू पर भगवान् महावीर के 2500 वां निर्वाण
संपादन करने में असफल रहती।

परिशिष्ट

भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति, माउण्ट आबू के सदस्यों की नामावली

1. श्री कुशालसिंहजी गलुण्डिया, भूतपूर्व उप-निदेशक, पर्यटन विभाग राजस्थान माउण्ट आबू, 29-12-1974 से 15-12-1975 — अध्यक्ष
2. श्री तेजसहिजी डांगी, भूतपूर्व प्राध्यापक, शिक्षण प्रशिक्षण केन्द्र देलवाड़ा माउण्ट आबू 16-12-1975 से
3. श्री रामचन्द्रजी जैन कान्ट्रेक्टर (दिवंगत) शिवाजी मार्ग, माउण्ट आबू 29-12-1974 से 4-8-76 तक — उपाध्यक्ष
4. श्री आत्मारामजी जैन कान्ट्रेक्टर, शिवाजी मार्ग, माउण्ट आबू 21-11-1976 से
5. श्री जोधसिंह मेहता, चीफ मैनेजर, देलवाड़ा श्वेताम्बर जैन मन्दिर माउण्ट आबू
6. श्री धर्मीलाल जैन, मैनेजर, दिगम्बर जैन मन्दिर देलवाड़ा, माउण्ट आबू — मन्त्री
7. श्री बाबूलालजी शाह, मुनीम, देलवाड़ा श्वेताम्बर जैन मन्दिर, माउण्ट आबू — सह-मंत्री
8. श्री पारसमलजी चौधरी, भूत-पूर्व अध्यापक, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, माउण्ट आबू — कोषाध्यक्ष
9. श्री देवाजी महाराज, शान्ति सदन, माउण्ट आबू — सांस्कृतिक मंत्री
10. श्री जसराजजी गांधी, रीडर, उपखण्ड अधिकारी, कार्यालय, माउण्ट आबू — सदस्य कार्यकारिणी समिति
11. श्री कँवरसेनजी जैन, माउण्ट आबू — ,,
12. श्री साकरचन्दजी शाह, देलवाड़ा, माउण्ट आबू — ,,
13. श्री बाबूलालजी दोसी, सर्वेयर, सर्वे ऑफ इण्डिया, माउण्ट आबू — ,,
14. श्री शंकरलालजी वागरेचा, राजस्थान ज्वेलर्स, माउण्ट आबू — ,,

मनोहरलालजी सिंघवी, भूत-पूर्व अध्यापक, शिक्षण
शिक्षण केन्द्र, देलवाड़ा माउण्ट आबू ,,
प्रेमचन्दजी जैन, शिवाजी मार्ग, माउण्ट आबू सदस्य
जयसिंहजी जैन, कान्ट्रेक्टर, पालनपुर ,,
आर. के. जैन, भूत-पूर्व डॉक्टर, मिलिट्री हास्पिटल,
उण्ट आबू ,,
वीरेन्द्रकुमारजी सिंघवी, भूत-पूर्व अध्यापक, शिक्षण
शिक्षण केन्द्र, माउण्ट आबू ,,
चम्पालालजी सिंघवी, भूत-पूर्व अध्यापक, उच्च
ध्यमिक विद्यालय, माउण्ट आबू ,,
छगनलालजी गेमावत, प्राध्यापक, भायन कॉलेज, अहमदाबाद ,,
भरतभाई मोहनलाल कोठारी, एडवोकेट, अहमदाबाद ,,
शान्तिलालजी मोदी, शारीरिक, शिक्षक, उच्च माध्यमिक
द्यालय, माउण्ट आबू
नथमलजी कांगटाणी, वरिष्ठ लिपिक, राजकीय कन्या
द्यालय, माउण्ट आबू ,,
श्रीमती स्नेहलता तिवारी, देलवाड़ा, माउण्ट आबू ,,
श्रीमती कान्ता बहन जैन, देलवाड़ा, माउण्ट आबू ,,
श्री गोपालसिंहजी जैन, नक्की झील, माउण्ट आबू ,,
श्री घनश्यामजी गामेचा, नक्की झील, माउण्ट आबू ,,

2 क्षमा, सन्तोप, सरलता और नम्रता ये चार धर्म के द्वार हैं।

3 धर्म का मूल विनय आचार-अनुशासन है।

4. सब प्राणियों को अपनी जिन्दगी प्यारी है। सुख सबको अ
लगता है और दुःख बुरा। वध सबको अप्रिय है और जीवन प्रि
सब प्राणी जीना चाहते हैं, कुछ भी हो सबको जीवन प्रिय है
अतः किसी भी प्राणी की हिंसा न करो।

5. जो संसार के दुःखों को जानता है, वह ज्ञानी कभी पाप नहीं करता

6. मूर्च्छा-आसक्ति को ही वस्तुतः परिग्रह कहा है। अधिक मिलने प
भी संग्रह नहीं करे, परिग्रह वृत्ति से अपने को दूर रखे।

7. सदा हितकारी वचन बोलना चाहिये।

8. बिना दी हुई किसी भी चीज को नहीं लेना चाहिये।

9. बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिये कि वह प्राणी से न किसी को तुच्छ
बताये और न झूठी प्रशंसा करे।

10. समभाव ही चरित्र है।

11. सदा सत्य में दृढ़ रहो।

11. तपों में श्रेष्ठ तप ब्रह्मचर्य है।

13. कर्मकर्त्ता का ही अनुगमन करता है।

14 दानों में अभयदान श्रेष्ठ है।

15. जो कुछ बोले पहले विचार कर बोले।

—श्री महावीर वाणी

4. प्रशस्ति हिन्दी में निम्नांकित शब्दों में दर्ज है—

"भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति आबू पर्वत ने भगवान् महावीर स्तम्भ नक्खी झील पर वीर संवत् 2502 वि. सं. 2032 में रु. 17001 सद्व्यय कर शिल्पी काशीराम वी. दवे से निर्माण करावाया और पुनः नगरपालिका आबू पर्वत को संरक्षणार्थ अर्पण किया एवं उद्घाटन 12-11-'975 ई. को श्री तुलसीरामजी जिलाधीश सिरोही के वरद् हस्त से सम्पन्न हुआ। काती गुरी—
शुभमस्तु।"

हिंदी में 'भगवान् महावीर स्तम्भ' के अक्षर खुदे हुए हैं।
पूर्व और पश्चिम के निम्नतम भाग की पट्टी जो कि 3 फीट 10 इंच लम्बी और 9 इंच चौड़ी है, वैसी ही नाप की पट्टी पर भगवान् महावीर के उपदेश श्री महावीर की वाणी का अंग्रेजी भाषान्तर है। अंग्रेजी भाषान्तर के उपदेश दो भागों में स्थानाभाव के कारण विभक्त किये गये हैं। आरम्भिक भाग, दक्षिण की तरफ है और इस उत्तरीय भाग की ओर 7 से 15 तक उपदेश अंकित हैं जो इस प्रकार हैं—

TEACHING OF LORD MAHAVIRA

7. Always speak benevolent words.
8. Don't take anything unless given by its owner.
9. A wise man should neither humiliate anyone through his words nor he should praise falsely.
10. Equanimity of soul is real conduct.
11. Always remain stedfast to truth.
12. Sexual abstinence is the best of all penances.
13. Karma (action) ever fallows its doer.
14. To give protection from all fears is the best of all charity.
15. Think well before whatever you speak.

4. अन्तिम दक्षिण भाग पर क्रमश: आकार और अक्षर गुजराती भाषा में निम्नांकित हैं—

1 सर्व प्रथम शिखर के बाहरी (दिखाई) देते हुए भाग पर सिंह (बाघ) और उसके नीचे छोटे से धर्म-चक्र में सूक्ष्म अहिंसा के अक्षर बने हुए हैं।

2. तत्त्वार्थ सूत्र का वाक्य इस प्रकार अङ्कित है:— सम्यग् दर्शन, सम्यग् ज्ञान अने सम्यग् चारित्र्य अणे मोक्ष मार्ग छे जैन धर्म ना उपदेश, वड़े पट्ट पर आलेखित हैं:—

जैन धर्म ना उपदेश

1. सौथी उत्कृष्ट मंगल धर्म छे।
2. धर्म अेटले अहिंसा, संयम अने तप, जेमनुं मन सदा धर्ममय होय छे तेमने देवताओं पण नमन करे छे।

   क्षमा, सन्तोष, सरलता अने नम्रता अे चार धर्म द्वार कहवाये छे।
3. धर्म नुं मूण विनय अथवा आचार अेटले के नियम छे।
4. सर्व प्राणीयों ने पोत पोतानी जींदगी प्यारी छे, सुख नी इच्छा सो कोई करे छे अने दुःख थी दूर भागे छे। वध कोई ने गमतो नथी, अने जीवन सो ने प्रिय लागे छे। जीववानी इच्छा सो कोई राखे छे।

   गमे तेम पण सर्वे ने जीवन प्रियकर छे।
   अेटले कोई पण प्राणीनी हिंसा करसो नहीं।
5. जे संसार ना दुःखो ने जाणे छे ते कदी पापाचरण करताज नथी।
6. आशक्ति माणस ने साचेसाच परिग्रह कहयों छे।
7. गमे तेटलु वधारे भने तो पण जे परिग्रह न करे अने अेवी परिग्रह वृत्ति थी हमेशा दूर रहेवुं।
8. सदा हितकारी वचन बोलवा जोइये।
9. कोई नी कोई पण चीज वस्तु आपण ने आपवामा न आवे त्यां सुधी कदीये लेवी जोईये नहीं।
10. बुद्धिशाली माणसे मन वचन थी न तो कोई ने उतारी पाडवो जोईये न कोईनो मिथ्या प्रशंसा करवी जोईये।
11. समभाव नेज चरित्रय कहयुं छे।
12. सदा सत्य मां शुद्ध रहवुं जोईये।
13. सघली तपश्चर्या मां ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ तप छे।
14. कर्म सदा कर्म करनार नी पाछल पाछल ज चालतुं रहे छे।
15. सघलां दान मां अभयदान मोटुं छे।

16. जे कोई बोलो ते बोलता पहला विचार करीनेज बोलो ।

—श्री महावीर वाणी

4. प्रशस्ति के अक्षर इस प्रकार खुदे हुए हैं:—

"भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति माउण्ट आबू ए भगवान् महावीर स्तंभ नखी तलाव ऊपर वीर सं 2502 (वि. सं. 2032) मां रु. 17001 मद् उपयोग करी शिल्पी कान्तीलाल वी. दवे पासे तैयार करावी नगर पालिका आबु पर्वत ने संरक्षणार्थे अर्पण कीनो अने उद्घाटन तारीख 12-11 1975 ई. श्री तुलसीरामजी जिलाधीश सिरोही नां वरद् हस्ते तिथी कार्तिक सुदी 9 संपन्न थयो, ॥ शुभमस्तु ॥"

5. गुजराती में 'भगवान महावीर स्तंभ' दर्ज है ।

6. सबसे नीचे ही नीचे, 3 फीट 10 इन्च लम्बी और 9 इन्च मोटी पट्टी पर अंग्रेजी में लाल अक्षरों में भगवान् महावीर के उपदेश (Teachings of Lord Mahavir) लिखा हुआ है और फिर भगवान् महावीर के उपदेश क्रम 1 से 6 तक अंग्रेजी भाषा में काले अक्षरों में बने हुए हैं ।

Teachings Of Lord Mahavira

1. Religion is the highest bliss. Religion means non-violence, restraint and penance. Even gods bow before him who is firm in religion.

2. Forgiveness, Contentment, Simplicity and modesty are four entrances to religion.

[illegible]mility is the root of religion.

परिशिष्ट 4

विविध-कार्य

भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति माउण्ट आबू ने जो साहित्यिक, सामाजिक और सार्वजनिक कार्य सम्पादन किये, उनका उल्लेख सविस्तार इस पुस्तक के अन्तिम भाग में और परिशिष्ट 3 में भगवान् महावीर स्तंभ में किया गया है। तत्पश्चात्, समिति के विविध कार्य का विवरण देना शेष रह जाता है। जिसमें 1. श्री महावीर रिलीफ फण्ड, 2. श्री महावीर पुस्तकालय कक्ष, 3. श्री महावीर माला कक्ष, और 4. तृतीय आबू पर्वत शरद् समारोह की प्रदर्शनी में 'महावीर कक्ष' का आयोजन सम्मिलित हैं। समिति ने अहिंसा-प्रचार का काम भी किया है।

1. श्री महावीर रिलीफ फण्ड समाज के निर्धन, निःसहाय और गरीब लोगों को जीवनोपयोगी कार्यों में सहायता पहुँचाने के उद्देश्य से स्थापित किया गया। समिति इस कार्य के लिए, समुचित धन संग्रह नहीं कर सकी, फिर भी भगवान् महावीर ने जो दान की महिमा वर्णित की है, उसके अनुमोदनार्थ, सांकेतिक सहायता पहुँचाई गई है। माउण्ट आबू के ब्लाईण्ड रिहेबिलेटशन (अन्ध पुनर्वास) केन्द्र के निर्धन प्रशिक्षणार्थियों को 50 ऊनी स्वेटर खादी भण्डार से खरीद कर दिये गये जिसमे समिति के रु. 360) खर्च हुए। इसी प्रकार आबू के जनरल हॉस्पिटल के रोगियों के लिए 6 ऊनी कम्बलें खरीद कर दी गई जिसमें 294) रुपये की रकम का सद्व्यय हुआ। इस प्रकार कुल रकम रुपया 654) श्री महावीर रिलीफ फण्ड में लगी।

2. श्री महावीर पुस्तकालय कक्ष समिति ने सांस्कृतिक और पर्वतीय नगरी आबू में जैन साहित्य विशेषकर भगवान् महावीर के जीवन उपदेश की ओर जन साधारण की रुचि बढ़ाने हेतु, यह निश्चय किया कि [illegible]लिका आबू पर्वत पर 'भगवान् महावीर कक्ष' स्थापित किया जावे

और इस तरह से, समिति का श्री शान्ति सदन ट्रस्ट के श्री देवाजी महाराज की प्रेरणा से, 5000 रु. की रकम, कुछ वर्षों पूर्व पुस्तकालय के लिये नगरपालिका में जमा की, वह भगवान महावीर कक्ष के लिये उपयोग में लाई गई। नगरपालिका ने एतदर्थ महावीर कक्ष के लिये गोद्रेज की अलमारियाँ और पुस्तकें खरीदी हैं और समिति ने भी कुछ कीमती पुस्तकें रुपया 238)25 से खरीद कर श्री महावीर पुस्तकालय कक्ष को भेंट की है जिनमें से 'समण-सुत्त' 'श्रमण भगवान महावीर' (अंग्रेजी भाग 1-5) विशेष महत्व की है। श्री देवाजी महाराज शान्ति सदन ने भी 'तीर्थंकर भगवान महावीर चित्र संपुट' नाम की मूल्यवान पुस्तक भेंट की जिसमें भगवान महावीर के जीवन और उपदेश को रंगीन चित्रों में प्रदर्शित किया गया है।

3. श्री महावीर कला-कक्ष—प्राचीन अर्बुद (आबू) पर्वत और प्रदेश में, जैन स्थापत्य के कई भूतल भग्नावशेष हैं। विशेषकर पुरातन समृद्धिशाली चन्द्रावती विध्वंस जैन नगरी में ऐसी कई कलाकृतियाँ और मूर्तियाँ मिली हैं, उनका संग्रह भगवान् महावीर के नाम से कला-कक्ष कायम होकर, उसमें किया जावे। यह योजना आबू पर्वत पर ही कार्यान्वित हो, ऐसा समिति का सुझाव रहा है। एतदर्थ, समिति ने राजस्थान के पुरातत्व और अजायबघर विभाग के संचालक महोदय को आबू पर्वत की राजकीय कला-वीथिका में चन्द्रावती की प्राचीन खंडित जैन मूर्तियों का संग्रह करा भगवान महावीर के नाम से कला-कक्ष खोलने का सुझाव प्रस्तुत किया। ऐसा मालूम हुआ है कि राजकीय कला वीथिका में प्राचीन सुन्दर कलात्मक भग्नावशेष लाये जा रहे हैं। आशा की जाती है कि राजकीय कला वीथिका आबू पर्वत पर, भगवान् महावीर के नाम से राज्य सरकार कला कक्ष खोले जिससे देश और विदेश के पर्यटक, प्राचीन सुन्दर और उत्कृष्ट जैन कला के नमूनों को देख कर, आबू के प्राचीन सांस्कृतिक गौरव की अनुभूति कर सकें। समिति इस दिशा में केवल सुझाव ही देने में अग्रसर रही है। भविष्य में, समिति इस ओर प्रगति की कामना करती है।

अन्तिम समिति ने, तृतीय शरद् समारोह के अन्तर्गत जो प्रदर्शनी माउण्ट आबू पर 21अक्टूबर से 15नवम्बर तक आयोजित हुई उसमें 'महा

परिशिष्ट—5

जैन ध्वज की विशिष्टता

जैन समाज का यह सर्वमान्य ध्वज पंच परमेष्ठी का प्रतीक रूप-पांच रंगों में प्रदर्शित किया गया है—

ध्वज के पांच रंगों की पहचान इस प्रकार है—

लाल रंग......................सिद्ध

पीला रंग......................आचार्य

सफेद रंग......................अरिहंत

हरा रंग ....उपाध्याय

काला रंग ....साधु

ध्वज के उपरोक्त पांच रंग, पांच महाव्रत रूप से भी इस प्रकार सूचक हैं—लाल रंग........ सत्य, पीला रंग........ अचौर्य, सफेद रंग........ अहिंसा, हरा रंग........ब्रह्मचर्य, और काला रंग........अपरिग्रह। पंच परमेष्ठी में अर्हंत और महाव्रत में अहिंसा का विशेष महत्त्व होने से, सफेद रंग को मध्य में रखा गया है।

ध्वज के बीच में चतुर्गति प्रतीक रूप स्वस्तिक को दर्शाया गया है। स्वस्तिक के ऊपर तीन बिन्दु है जो सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र के सूचक हैं। तीन बिन्दुओं के ऊपर अर्द्ध चंद्र सिद्धशिला को लक्षित करता है और अर्द्ध-चन्द्र के ऊपर एक बिन्दु है जो मुक्त जीवन अर्थात मोक्ष का सूचक है।

ँ

०००

卐

जैन संस्कृति में स्वास्तिक का विशेष महत्त्व है अतः इसको ध्वज के बीच में रखा गया है। चतुर्गति संसार में परिभ्रमण का कारण है और इस से आगे बढ़ कर अहिंसा को आचरण में लाने और अर्हन्त को हृदय से अपनाने पर, निर्वाण की प्राप्ति की जा सकती है।

जैन ध्वज का रंग और आकार निम्न प्रकार का है—

लाल रंग : सिद्ध		सत्य
पीला रंग : आचार्य		अचौर्य
सफेद रंग अरिहंत	ॐ ००० 卐	अहिंसा
हरा रंग : उपाध्याय		ब्रह्मचर्य
काला रंग : साधु		अपरिग्रह

नोट : 1. ध्वज का आकार : लम्बा चोरस
2. लम्बाई—चौड़ाई : 3 × 2
3. लाल, पीला, हरा, काला रंग की पट्टियां समान
4. सफेद रंग की पट्टी : प्रत्येक दूसरे रंग की पट्टी से दुगुनी
5. स्वस्तिक का रङ्ग केशरिया।

जैन ध्वज और जैन प्रतीक का विवरण 'भगवान महावीर 2500 वां महोत्सव' माहिती विशेषांक पृष्ठ 367-369-370 से साभार अनुदित।

परिशिष्ट—5

भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति, माउण्ट आबू, तारीख 5-1-1975 ई. से 16-12-1977 तक

लेखा–विवरण

जमा

रु. पैसे	विवरण
264)00	श्री सदस्यता शुल्क खाते समिति के सदस्यों से
13827)00	श्री सहाय फण्ड खाते रु. 101 या उससे अधिक धन राशि भेंटकर्त्ताओं से।
501)	रु. श्री गौतम भाई सी. शाह अहमदाबाद।
501)	रु. श्री पुखराजजी हीराचन्दजी, सादड़ी।
501)	रु. सेठ श्री कल्याणजी परमानन्दजी पेढी, सिरोही।
501)	श्री जोधसिंह मेहता, उदयपुर

खर्च

रु. पै.	विवरण
19190)20	श्री महावीर स्तम्भ नक्की झील माउण्ट आबू खाते
430)50	श्री महावीर कक्ष तृतीय आबू शरद् समारोह प्रदर्शनी खाते
238)25	श्री महावीर पुस्तकालय, आबू पर्वत खाते
654)00	श्री महावीर रिलीफ फण्ड अनुकम्पा दान खाते
363)50	श्री अहिंसा प्रचार खाते
51)20	'भगवान् महावीर और आधुनिक युग' निबंध प्रतियोगिता खाते
6)00	साहित्य प्रकाशन श्रमण परम्परा की रूपरेखा पुस्तक प्रकाशन खाते

जमा

रु.

101) श्री गेंदालालजी, जयपुर
  " योगेश कुमारजी, जयपुर
201) " मालीरामजी, जयपुर
" " राजकुमारजी, जयपुर
" " चुन्नीलालजी, जयपुर
" " नरेन्द्रकुमारजी, जयपुर
" " लालचन्दजी, जयपुर
" " इन्द्रजी, जयपुर
101) " भरतभाई मोहनलाल कोठारी, अहमदाबाद
101) श्री भरत भाई दलाल, अहमदाबाद
301) " शंकरलालजी बागरेचा, राजस्थान ज्वेलर्स, आबू
201) श्री घनश्यामजी पामेचा, आबू
125) " जैन मैत्री संघ, ग्रीन पार्क, नई दिल्ली
101) " कुशालसिंहजी गलुंडिया, जयपुर
101) " चम्पकलाल अमीचन्द भाई, भावनगर

जमा

रु.	
251)	" जौहरीलालजी पटवा, जैतारण
101)	" वीरचन्दजी हजारीमलजी, शिवगंज
101)	" पन्नालालजी झवेरी, अहमदाबाद
13827)00	
8507)25	श्री यात्रीगण खाते रुपया 101) से कम धन-राशि भेंटकर्ता यात्रियों से
321)71	ब्याज खाता खाते, दी सिरोही डिस्ट्रिक्ट कोमर्शियल को-ओपरेटिव बैंक लि. माउण्ट आबू से
22919)96	कुल योग

निरीक्षक

ह० बाबूलाल शाह, मुनीम, श्री देलवाड़ा श्वेताम्बर जैन मन्दिर, माउण्ट आबू
कोषाध्यक्ष, भगवान् महावीर 2500 वां नर्वाण महोत्सव समिति, माउण्ट आबू

ह० मुणोलाल लखनीराम लेखापाल सेठ श्री कल्याणजी परमानन्दजी पेढी देलवाड़ा माउण्ट आबू

ह० जोधसिंह मेहता, चीफ मैनेजर, श्री देलवाड़ा श्वेताम्बर जैन मन्दिर, माउण्ट आबू
मंत्री, भगवान महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति, माउण्ट, आबू